Postal Regn No./C.G./RYP DN/48/2022-24

website- www.dvpnews.in

रायपुर (छ.ग.) एवं झांसी (उ.प्र.) से एक साथ प्रकाशित राष्ट्रीय हिन्दी पत्र

# दैनिक विश्व परिवार

● अंक : 173 ● वर्ष : 12 ● रायपुर, शनिवार 28 दिसम्बर 2024 ● पृष्ठ : 08 ● मूल्य : 3 रूपए ● संस्थापक : कीर्तिशेष- श्री कैलाश चन्द्र जैन

**सुविचार**

मित्र वही जो आवश्यकता के समय काम आता है।

A Friend in need is a friend in deed.

आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज

## संक्षिप्त समाचार

### राज्यपाल रमेन डेका के सभी पूर्व निर्धारित कार्यक्रम स्थगित

**रायपुर (विश्व परिवार)।** राज्यपाल श्री रमेन डेका द्वारा पूर्व प्रधानमंत्री डॉ मनमोहन सिंह के निधन पर राष्ट्रीय शोक की अवधि में अपने सभी पूर्व निर्धारित कार्यक्रम स्थगित कर दिये गये हैं।

### ईडी ने ऑक्टाएफएक्स के 800 करोड़ रुपए के घोटाले का किया पर्दाफाश

**नई दिल्ली (आरएनएस)।** प्रवर्तन निदेशालय (ईडी) ने फॉरेक्स ट्रेडिंग प्लेटफॉर्म ऑक्टाएफएक्स से जुड़ी 800 करोड़ रुपये की धोखाधड़ी का खुलासा किया है, जिसमें एक जटिल योजना का खुलासा हुआ है जिसने ऑपरेशन के केवल नौ महीनों में भारतीय निवेशकों को धोखा दिया था।

### बांग्लादेश में क्रिसमस की रात 17 घरों को किया आग के हवाले

**ढाका (आरएनएस)।** बांगलादेश में अल्पसंख्यक सुरक्षित नहीं हैं। पहले यहां हिंदुओं के साथ अत्याचार हुआ। अब ईसाइयों के साथ उत्पीड़न की खबरें सामने आ रही हैं। बंदरबन जिले में अज्ञात बदमाशों ने क्रिसमस की रात को त्रिपुरा समुदाय के 17 घरों को आग के हवाले कर दिया। एक रिपोर्ट के अनुसार, यह घटना उस समय हुई जब ये सभी क्रिसमस के त्योहार में भाग लेने के लिए दूसरे गांव गए थे। उनके गांव में कोई चर्च नहीं था।

# डॉ. मनमोहन सिंह का अंतिम संस्कार आज

## डॉ. मनमोहन सिंह के पार्थिव शरीर को आज कांग्रेस मुख्यालय लाया जाएगा, 7 दिन का राजकीय शोक घोषित

### प्रधानमंत्री मोदी सहित दिग्गज नेताओं ने किए अंतिम दर्शन

**नई दिल्ली (आरएनएस)।** देश के पूर्व प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह का अंतिम संस्कार कल (28 दिसंबर) को सुबह 10 बजे किया जाएगा। डॉ. मनमोहन सिंह के निधन पर भारत सरकार ने 7 दिनों के राजकीय शोक की घोषणा की है। इस दौरान देशभर में राष्ट्रीय ध्वज आधे झुके रहेंगे और किसी भी आधिकारिक मनोरंजन कार्यक्रम का आयोजन नहीं किया जाएगा। इसके अलावा सभी भारतीय मिशनों और उच्चायोगों में विदेशों में भी राष्ट्रीय ध्वज आधे झुके रहेंगे। वहीं, पूर्व पीएम मनमोहन सिंह के पार्थिव शरीर को कल 28 दिसंबर को लोगों के अंतिम दर्शन के लिए कांग्रेस मुख्यालय 24 अकबर रोड लाया जाएगा। उनका अंतिम संस्कार राजघाट के पास किया जाएगा।

डॉ. मनमोहन सिंह साल 2004 से 2014 तक दो बार प्रधानमंत्री रहे थे। उनकी गिनती देश के बड़े अर्थशास्त्रियों में होती थी। पूर्व पीएम मनमोहन सिंह की निधन की खबर मिलने के बाद एम्स के बाहर भारी संख्या में दिल्ली पुलिस और अर्धसैनिक बल के जवानों की तैनाती की गई है।

पत्र में गृह मंत्रालय की ओर से कहा गया कि भारत सरकार अत्यंत दु:ख के साथ भारत के पूर्व प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह के 26 दिसंबर को एम्स अस्पताल, नई दिल्ली में निधन हो गया। दिवंगत गणमान्य व्यक्ति के सम्मान में 26 दिसंबर 2024 से 1 जनवरी 2025 तक सरकार 7 दिनों के राजकीय शोक की घोषणा करती है। इस दौरान पूरे भारत में राष्ट्रीय ध्वज आधा झुका रहेगा और राजकीय शोक की अवधि के दौरान कोई आधिकारिक मनोरंजन कार्यक्रम नहीं होगा। यह भी निर्णय लिया गया है कि स्वर्गीय डॉ. मनमोहन सिंह का राजकीय सम्मान के साथ अंतिम संस्कार किया जाएगा। विदेश में स्थित सभी भारतीय मिशनों और उच्चायोगों में भी अंतिम संस्कार के दिन राष्ट्रीय ध्वज आधा झुका रहेगा। बता दें कि देश के पूर्व प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह का गुरुवार को 92 साल की उम्र में यहां एम्स में निधन हो गया। तबीयत बिगड़ने के बाद गुरुवार शाम को अस्पताल में भर्ती कराया गया था।

एम्स ने एक आधिकारिक बयान में बताया कि उन्हें शाम 8.06 पर एम्स के मेडिकल इमरजेंसी में भर्ती कराया गया था। इससे पहले उम्र से संबंधित बीमारियों के लिए उनका उपचार चल रहा था और घर पर वह अचानक बेहोश हो गए थे। उन्होंने गुरुवार रात 9.51 बजे अंतिम सांस ली। मनमोहन सिंह साल 2004 से 2014 तक दो बार प्रधानमंत्री रहे थे। उनकी गिनती देश के बड़े अर्थशास्त्रियों में होती थी।

शुक्रवार को उपराष्ट्रपति जगदीप धनखड़, प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी, गृहमंत्री अमित शाह, जेपी नड्डा, कांग्रेस नेता सोनिया गांधी सहित कई दिग्गजों ने उनके पार्थिव शरीर के अंतिम दर्शन किए। मनमोहन सिंह का अंतिम संस्कार कल (28 दिसंबर) को सुबह 10 बजे किया जाएगा।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने पूर्व पीएम मनमोहन सिंह को श्रद्धांजलि देते हुए कहा कि 'डॉ. मनमोहन सिंह की विनम्रता, सौम्यता और बौद्धिकता उनकी पहचान बनी। दुनिया के प्रतिष्ठित संस्थानों से शिक्षा लेने और सरकार के शीर्ष पदों पर रहने के बाद भी उनका व्यक्तित्व बेहद सरल था। वे सभी के लिए सहज उपलब्ध रहे। जब मैं सीएम था, तब उनके साथ राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय मुद्दों पर खुले मन से चर्चा होती थी। मेरे दिल्ली आने पर उनसे बात और मुलाकात होती थी।'

राहुल गांधी और कांग्रेस अध्यक्ष मल्लिकार्जुन खड़गे बेलगावी से गुरुवार की देर रात दिल्ली पहुंचने के बाद सीधे डॉ. मनमोहन सिंह के आवास गए थे। राहुल ने एक्स पर लिखा- मैंने अपना मार्गदर्शक और गुरु खो दिया।

राष्ट्रीय जनता दल (राजद) के प्रमुख और बिहार के पूर्व मुख्यमंत्री लालू प्रसाद यादव ने शुक्रवार को पूर्व प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह के निधन पर शोक जताया। पूर्व पीएम की ईमानदारी को नमन करते हुए कहा कि उन्होंने देश की निस्वार्थ भाव से सेवा की। राजद अध्यक्ष लालू यादव ने कहा कि डॉ. मनमोहन सिंह का यूं चले जाना बहुत बड़ी क्षति है।

उन्होंने पहली बार 22 मई 2004 और दूसरी बार 22 मई 2009 को प्रधानमंत्री के पद की शपथ ली थी।

डॉ. मनमोहन सिंह का जन्म 26 सितंबर 1932 को पश्चिमी पंजाब के गाह में हुआ था, जो अब पाकिस्तान का हिस्सा है। उनके पिता का नाम गुरमुख सिंह और मां का नाम अमृत कौर था। उन्होंने साल 1958 में गुरशरण कौर से शादी की थी। उनकी तीन बेटियां भी हैं, जिनका नाम उपिंदर सिंह, दमन सिंह और अमृत सिंह हैं।

## 1991 में पेश बजट मील का पत्थर था, डॉ. सिंह ने भारतीय अर्थव्यवस्था को बनाया उदार : वित्त मंत्री सीतारमण

**नई दिल्ली (आरएनएस)।** शीर्ष राजनीतिक नेताओं और उद्योगपतियों ने पूर्व प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह के निधन पर शोक व्यक्त करते हुए कहा कि उनके नेतृत्व, विनम्रता और समर्पण को हमेशा याद किया जाएगा। केंद्रीय वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने कहा कि डॉ. मनमोहन सिंह एक दूरदर्शी नेता थे और उन्होंने आरबीआई के गवर्नर और भारत के वित्त मंत्री के रूप में देश के बड़े कार्यभार संभाले। वित्त मंत्री सीतारमण ने एक्स सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर पोस्ट किया, 1991 में पेश बजट मील का पत्थर था, जिसने भारतीय अर्थव्यवस्था को उदार बनाया। वे सभी के द्वारा सम्मानित, मृदुभाषी और सौम्य थे। उनके परिवार और दोस्तों के प्रति संवेदना।

## पूर्व प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह के निधन पर छत्तीसगढ़ में 7 दिन का राजकीय शोक घोषित

**रायपुर (आरएनएस)।** भारत के पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह के निधन के बाद छत्तीसगढ़ सरकार ने 7 दिन का राजकीय शोक घोषित किया है। यह शोक 26 दिसंबर से लेकर 1 जनवरी तक प्रभावी रहेगा। इस दौरान राज्य में कोई भी सांस्कृतिक या मनोरंजन कार्यक्रम आयोजित नहीं किया जाएगा। राज्य सरकार की ओर से सभी कलेक्टरों को आदेश जारी किया गया है कि समस्त सरकारी भवनों और उन स्थानों पर जहां राष्ट्रीय ध्वज नियमित रूप से फहराया जाता है, वहां ध्वज आधे झुके रहेंगे। इसके साथ ही मुख्यमंत्री विष्णु देव साय, उपमुख्यमंत्री अरुण साव और मंत्री ओपी चौधरी के सभी निर्धारित दौरे भी रद्द कर दिए गए हैं।

**मुख्यमंत्री साय ने गहरी शोक संवेदना व्यक्त की :** मुख्यमंत्री विष्णु देव साय ने पूर्व प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह के निधन पर गहरी शोक संवेदना व्यक्त की है। उन्होंने कहा कि डॉ. मनमोहन सिंह का निधन देश और दुनिया के लिए एक अपूरणीय क्षति है। वे एक प्रख्यात अर्थशास्त्री थे और उनके योगदान को देश हमेशा याद रखेगा। मुख्यमंत्री ने बताया कि डॉ. मनमोहन सिंह ने देश के वित्त मंत्री, रिजर्व बैंक ऑफइंडिया के गवर्नर और योजना आयोग के प्रमुख जैसे महत्वपूर्ण पदों पर रहते हुए भारतीय अर्थव्यवस्था को नई दिशा दी।

## नगरीय प्रशासन विभाग में 51 अभियंताओं सहित 183 अधिकारियों और कर्मचारियों के तबादले

### पदोन्नति के बाद मुख्य नगर पालिका अधिकारी बने 36 अधिकारियों की नवीन पदस्थापना

**रायपुर (विश्व परिवार)।** राज्य शासन के नगरीय प्रशासन एवं विकास विभाग ने 183 अधिकारियों-कर्मचारियों के स्थानांतरण आदेश जारी किए हैं। इनमें 36 पदोन्नत अधिकारी भी शामिल हैं। स्थानांतरित अधिकारियों-कर्मचारियों में मुख्य नगर पालिका अधिकारियों, सहायक संचालकों और अभियंताओं से लेकर राजस्व अधिकारी, निगम सचिव, राजस्व निरीक्षक, सहायक राजस्व निरीक्षक, सहायक राजस्व उप निरीक्षक, स्वास्थ्य निरीक्षक, सहायक लेखाधिकारी, लेखापाल, समयपाल, सहायक ग्रेड-1, सहायक ग्रेड-2, सहायक ग्रेड-3, कैशियर, प्रोग्रामर, मानचित्रकार, सफाई दरोगा, पंप अटेन्डेंट, वाहन चालक, वाल्वमैन और भृत्य शामिल हैं। नगरीय प्रशासन विभाग ने कार्यालय अधीक्षक, राजस्व निरीक्षक, राजस्व उप निरीक्षक, मुख्य लिपिक, लेखापाल, मुख्य लिपिक-सह-लेखापाल और सहायक ग्रेड-2 के पदों पर कार्यरत कर्मचारियों को मुख्य नगर पालिका अधिकारी पदोन्नत करते हुए 36 अधिकारियों की नई पदस्थापना की है। विभाग ने 51 अभियंताओं का भी तबादला किया है। इनमें कार्यपालन अभियंता के साथ ही सहायक अभियंता और उप अभियंता भी शामिल हैं।

## रायपुर और बिलासपुर के डीआरएम बदले गए

**रायपुर (आरएनएस)।** भारतीय रेलवे में बड़े स्तर पर प्रशासनिक फेरबदल किया गया है। रेलवे बोर्ड ने देशभर के 23 मंडल रेल प्रबंधकों (डीआरएम) का तबादला कर दिया है। इस फेरबदल में रायपुर और बिलासपुर मंडल के डीआरएम भी बदले गए हैं। जारी आदेश के अनुसार, बिलासपुर मंडल में राजमल खोईवाल को नया डीआरएम नियुक्त किया गया है। वे उत्तर पश्चिम रेलवे में एनएफएचएह-आई आर एसएसई अधिकारी के रूप में कार्यरत थे और अब प्रवीण पांडे की जगह लेंगे। वहीं, रायपुर मंडल में कोगंती संबसीवा राव को डीआरएम बनाया गया है। वे दक्षिण मध्य रेलवे में एसएजी-आईआरटीएस अधिकारी के तौर पर सेवाएं दे चुके हैं और अब संजीव कुमार (आईआरएसईई) का स्थान लेंगे।

## स्वदेशी मेला का सादगीपूर्ण ढंग से हुआ शुभारंभ, नहीं हुआ कोई रंगारंग कार्यक्रम

### मेला स्थल में देश के पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह जी को दी गई भावभीनी श्रद्धांजलि

**रायपुर (विश्व परिवार)।** राजधानी रायपुर के साइंस कॉलेज मैदान में प्रतिवर्ष होने वाले 8 दिवसीय भव्य स्वदेशी मेले का आज सादगीपूर्ण तरीके से वैदिक मंत्रोच्चार के साथ शुभारंभ किया गया। इस अवसर पर मेला स्थल में आयोजक संस्था स्वदेशी जागरण फाउंडेशन की ईकाई स्वदेशी विकास विपणन केंद्र से जुड़े सभी कार्यकर्ताओं, मेला समिति के पदाधिकारियों ने पूर्व प्रधानमंत्री डॉ.मनमोहन सिंह के निधन पर शोक व्यक्त करते हुए उन्हें भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की।

गौरतलब है कि स्वदेशी मेला का भव्य और रंगारंग शुभारंभ प्रदेश के मुख्यमंत्री विष्णुदेव साय,जल संसाधन मंत्री केदार कश्यप,पूर्व मंत्री एवं विधायक राजेश मूणत,स्वदेश जागरण मंच के क्षेत्रीय संयोजक सुधीर दाते के बतौर आतिथ्य में सुनिश्चित था। परंतु पूर्व प्रधानमंत्री डॉ मनमोहन सिंह के निधन पश्चात हुए राष्ट्रीय शोक के चलते मंच और रंगारंग कार्यक्रम स्थगित कर दिए गए। सादगीपूर्ण ढंग से मिला आयोजन का निर्णय लिया गया।

स्वदेशी मेला के संयोजक प्रवीण मैशेरी, स्वागत समिति के अध्यक्ष सुनील अग्रवाल स्वागत समिति के सचिव रविन्द्र सिंह, मेला सह संयोजक अमरजीत सिंह छाबड़ा व मनीषा सिंह ने जारी विज्ञप्ति में कहा कि पूर्व प्रधानमंत्री डॉ मनमोहन सिंह का गुजरना संपूर्ण राष्ट्र के लिए अपूरणीय क्षति है। स्वावलंबी भारत बनाने की दिशा में यानी स्वदेशी के क्षेत्र में भी उनका महत्वपूर्ण योगदान था। उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए मेला स्थल पर आज संध्या भजन संध्या का आयोजन किया गया। इसी सादगीपूर्ण ढंग से मेला के प्रथम दिवस की शुरुआत हुई।

**स्वदेशी मेला में आज होगी व्यंजन प्रतियोगिता :** साइंस कॉलेज मैदान में आयोजित स्वदेशी मेला के दूसरे दिवस 28 दिसंबर को व्यंजन प्रतियोगिता का आयोजन किया गया है। जिसका समय दोपहर 2 से 3 बजे तक होगा। दोपहर 3 बजे कुटुंब प्रबोधन पर व्याख्यानमाला भी आयोजित है।

## दिल्ली से तय होंगे भाजपा जिला अध्यक्ष, संगठन ने भेजा नामों का पैनल, आलाकमान करेगा अंतिम फैसला

**रायपुर (विश्व परिवार)।** छत्तीसगढ़ की राजधानी रायपुर के कुशाभाऊ ठाकरे परिसर में बीजेपी संगठन चुनाव की समीक्षा बैठक संपन्न हुई। बैठक में संगठन चुनाव की आगामी प्रक्रिया पर चर्चा हो रही है। जहां भाजपा प्रदेश प्रभारी नितिन नबीन, क्षेत्रीय संगठन महामंत्री अजय जामवाल, प्रदेश अध्यक्ष किरण सिंहदेव, चुनाव अधिकारी और पर्यवेक्षक मौजूद हैं।

मिली जानकारी के मुताबिक सभी 33 जिलों से आए नामों में से 3 नामों का पैनल तैयार कर दिल्ली भेजा जाएगा। जिला अध्यक्षों की नियुक्ति पर जातिगत समीकरण से महिलाओं की भी हिस्सेदारी रहने वाली है। भाजपा ने जिला अध्यक्षों की नियुक्ति प्रक्रिया में जातिगत समीकरण और सभी वर्गों के प्रतिनिधित्व को प्राथमिकता दी है। पार्टी का मुख्य उद्देश्य है कि संगठनात्मक चुनावों में किसी भी प्रकार का विवाद न हो और सभी वर्गों का संतुलित प्रतिनिधित्व सुनिश्चित किया जाए। इस बैठक में प्रदेश भर से जिला अध्यक्षों के चयन के लिए तीन-तीन नामों का पैनल तैयार किया गया। इन नामों पर अंतिम निर्णय दिल्ली में 29 या 30 दिसंबर को होने वाली बैठक में लिया जाएगा। संभावना है कि तब तक जिला अध्यक्षों की घोषणा होगी। भाजपा द्वारा जिला अध्यक्षों की नियुक्ति में जातिगत समीकरण और सभी वर्गों के प्रतिनिधित्व का विशेष ध्यान रखा जा रहा है। पार्टी का उद्देश्य है कि संगठन चुनाव में किसी भी प्रकार का विवाद न हो और सभी वर्गों को संतुलित प्रतिनिधित्व मिले। मिली जानकारी मुताबिक रायपुर शहर अध्यक्ष पद के लिए कई नामों पर चर्चा हो रही है। इनमें महाराष्ट्र के पूर्व राज्यपाल रमेश बैस के भतीजे ओंकार बैस, वरिष्ठ पार्षद सूर्यकांत राठौर, जिला महामंत्री रमेश ठाकुर और जिला पदाधिकारी सत्यम दुआ के नाम प्रमुख हैं। वहीं, रायपुर ग्रामीण क्षेत्र से वर्तमान अध्यक्ष श्याम नारंग, अनिल अग्रवाल, अशोक सिन्हा और पूर्व विधायक संजय डीडी के नाम चर्चा में हैं।

बैठक में यह निर्णय लिया गया कि जिला अध्यक्षों के चयन प्रक्रिया में स्थानीय सांसद, विधायक, पूर्व विधायक और प्रदेश के वरिष्ठ नेताओं से परामर्श लिया जाएगा। तीन-तीन उम्मीदवारों के पैनल को लेकर गहन चर्चा की गई, जिसकी अंतिम समीक्षा दिल्ली में की जाएगी।

## सीएमडी डॉ. प्रेम सागर मिश्रा ने मुख्य सचिव, पीसीसीएफ एवं सीईसीबी चेयरमैन से की भेंट

### एसईसीएल संचालन से संबंधित प्रमुख मुद्दों पर की चर्चा

**रायपुर (विश्व परिवार)।** सीएमडी डॉ. प्रेम सागर मिश्रा ने आज दिनांक 27 दिसंबर 2024 को राजधानी रायपुर का दौरा किया और छत्तीसगढ़ सरकार के वरिष्ठ अधिकारियों के साथ विभिन्न विषयों पर चर्चा की।

डॉ. मिश्रा ने छत्तीसगढ़ सरकार के मुख्य सचिव श्री अमिताभ जैन (आईएएस), प्रधान मुख्य वन संरक्षक (पीसीसीएफ) और वन बलों के प्रमुख (एचओएफएफ) श्री वी. श्रीनिवास राव (आईएफएस) और छत्तीसगढ़ पर्यावरण संरक्षण बोर्ड (सीईसीबी) के अध्यक्ष श्री अंकित आनंद (आईएएस) से मुलाकात की।

चर्चा में पर्यावरण और वन मंजूरी, भूमि अधिग्रहण और राज्य शासन के साथ बेहतर समन्वय से जुड़े महत्वपूर्ण मुद्दों चर्चा की गई।

## प्रदेश के 9 और स्वास्थ्य संस्थाओं को मिला राष्ट्रीय गुणवत्ता आश्वासन मानक प्रमाण

**केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय की टीम ने नवंबर व दिसंबर माह में अस्पताल का किया था मूल्यांकन**

### स्वास्थ्य मंत्री ने उत्कृष्टता प्रमाण पत्र हासिल करने वाले अस्पतालों के डॉक्टरों और अन्य मेडिकल स्टॉफ को दी बधाई

**रायपुर (विश्व परिवार)।** केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय ने उत्कृष्ट स्वास्थ्य सेवा और मरीजों को बेहतर इलाज उपलब्ध कराने वाले राज्य के नौ स्वास्थ्य केन्द्रों को राष्ट्रीय गुणवत्ता आश्वासन मानक (NQAS – National Quality Assurance Standard) प्रमाण-पत्र प्रदान किया है। इनमें जांजगीर चांपा, सूरजपुर, महासमुंद, दुर्ग व बिलासपुर के स्वास्थ्य केंद्र शामिल हैं। केन्द्र सरकार ने राष्ट्रीय गुणवत्ता आश्वासन मानकों पर खरे उतरने वाले स्वास्थ्य केन्द्रों को एनक्यूएएस प्रमाण-पत्र से सम्मानित किया है। स्वास्थ्य मंत्री श्याम बिहारी जायसवाल ने उत्कृष्टता प्रमाण-पत्र हासिल करने वाले इन सभी अस्पतालों के डॉक्टरों और अन्य मेडिकल स्टॉफ को बधाई देते हुए कहा कि मुख्यमंत्री श्री विष्णुदेव साय के नेतृत्व में छत्तीसगढ़ में स्वास्थ्य सुविधाओं के विस्तार का कार्य निरन्तर जारी है। उन्होंने भरोसा जताया कि ये अस्पताल आगे भी अपनी उत्कृष्टता बरकरार रखते हुए मरीजों की सेवा करेंगे और प्रदेश के दूसरे अस्पतालों के लिए नए प्रतिमान स्थापित करेंगे।

केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय की टीम ने इस साल नवम्बर में इन नौ स्वास्थ्य केंद्रों में मरीजों के लिए उपलब्ध सेवाओं की गुणवत्ता का परीक्षण किया था। टीम ने इस संबंध में मरीजों से भी फीडबैक लिया था। टीम के मूल्यांकन में सूरजपुर जिले के आयुष्मान आरोग्य मंदिर प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र चुंगड़ी को 86.65 प्रतिशत, उप स्वास्थ्य केन्द्र पाकनी को 86.43 प्रतिशत, पालदा को 84.11 प्रतिशत व जाजावल को 80.44 प्रतिशत, जांजगीर चांपा जिले के प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र तिलई को 88.22 प्रतिशत व आयुष्मान आरोग्य मंदिर उप स्वास्थ्य केन्द्र सुकुलपारा को 88.57 प्रतिशत, महासमुंद जिले के उपस्वास्थ्य केन्द्र सोनासिल्ली को 87.32 प्रतिशत, दुर्ग जिले के उप स्वास्थ्य केन्द्र कोड़िया को 82.50 प्रतिशत व बिलासपुर जिले के आयुष्मान आरोग्य मंदिर उप स्वास्थ्य केन्द्र लुफा को 83.83 प्रतिशत अंक प्राप्त हुए हैं। उल्लेखनीय है कि राष्ट्रीय गुणवत्ता आश्वासन मानक प्रमाण-पत्र प्रदान करने के पूर्व विशेषज्ञों की टीम द्वारा अस्पताल की सेवाओं और संतुष्टि स्तर का विभिन्न मानकों पर परीक्षण किया जाता है। इनमें उपलब्ध सेवाएं, मरीजों के अधिकार, इनपुट, सपोर्ट सर्विसेस, क्लिनिकल सर्विसेस, इन्फेक्शन कंट्रोल, गुणवत्ता प्रबंधन और आउटकम जैसे पैरामीटर शामिल हैं। इन कड़े मानकों पर खरा उतरने वाले अस्पतालों को ही केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय द्वारा गुणवत्ता प्रमाण-पत्र जारी किए जाते हैं।

# जाबो कार्यक्रम के तहत् निकाय के लोगों को किया जा रहा जागरूक

## जाबो कार्यक्रम के तहत् वोटर लिखकर मानव श्रृंखला बनाया एडीएम ने दिलवाई 100 प्रतिशत मतदान करने की शपथ



**दुर्ग ( विश्व परिवार )।** नगर निगम स्वीप अभियान के तहत जिला एवं निगम प्रशासन की तरफ से आयोजन किया गया। मानव श्रृंखला द्वारा वोटर लिखकर मानस भवन प्रांगण में मतदाताओं को जागरूक किया गया साथ ही साथ शपथ के माध्यम से संकल्प लिया गया कि वह सौ फीसदी मतदान करेंगे इस अवसर पर स्थानीय निकाय आम चुनाव को स्वतंत्र और निष्पक्ष तरीके से संपन्न कराने के लिए कलेक्टर सुश्री ऋचा प्रकाश चौधरी के निर्देश एवं कमिश्नर सुमित अग्रवाल के मार्गदर्शन में जाबो (जागव वोटर) कार्यक्रम अंतर्गत व्यापक स्तर पर जागरूकता अभियान चलाया जा रहा है।

नगर निगम प्रशासन की ओर से निकाय चुनाव के लिए में मतदाता जागरूकता गतिविधियों के माध्यम से जागरूकता बढ़ाने का प्रयास किया जा रहा है। इसी क्रम में जमीनी स्तर पर आम नागरिकों, नव मतदाताओं व महिला शक्ति को मतदान के प्रति जागरूक किया जा रहा है।निगम क्षेत्र में अभियान चला कर लोगों को मतदान के लिए सब काम छोड़ मतदान करो की सीख दी जा रही है।

इसी तारतम्य में मानव श्रृंखला बनाकर लोगो को शपथ दिलाकर मतदाताओं को निरंतर जागरूक करने के लिए प्रेरित किया जा रहा है।

इस दौरान एडीएम अरविंद्र एक्का, एसडीएम हरवंश सिंह मिरी, उपायुक्त मोहेंद्र साहू, नारायण यादव, चंदन मनहरे, सत्यनारायण शर्मा, अनिता सिंह एवं अधिकारी, कर्मचारी उपस्थित रहे।

# रायपुर रेल मंडल में ट्रेनों के सुरक्षित परिचालन को लेकर रेलवे इंस्टिट्यूट इंजीनियरिंग कॉलोनी रायपुर में संरक्षा सेमिनार का किया गया आयोजन




**रायपुर ( विश्व परिवार )।** दिनांक 27 दिसंबर 2024 को दक्षिण पूर्व मध्य रेलवे रायपुर रेल मंडल के संरक्षा विभाग के द्वारा ट्रेनों के सुरक्षित परिचालन हेतु परिचालन, विद्युत परिचालन, यांत्रिक, सिग्नल एवं दूरसंचार, इंजीनियरिंग तथा राजभाषा विभाग के कर्मचारियों के साथ रेलवे इंस्टिट्यूट इंजीनियरिंग कॉलोनी/रायपुर में संरक्षा संगोष्ठी का आयोजन किया गया। जिसमें निम्न बिंदुओं पर चर्चा की गई-

स्पैड से बचाव के लिए बरती जानेवाली सावधानियां एवं ऑटोमेटिक सिग्नलिंग सेक्शन में ट्रेन परिचालन के लिए दिये जानेवाले विभि-?न प्राधिकार, शंटिंग के दौरान बरती जानेवाली सावधानियां एवं ट्रैक मेंटेनेंस मशीन का कार्य (सामान्य नियम-4.65), इंजीनियरिंग विभाग के द्वारा बरती जानेवाली शीतकालीन सावधानियां एवं पेट्रोलिंग तथा समपार फाटक में कार्य के दौरान गेटकीपर द्वारा बरती जानेवाली सावधानियां, ट्रेन में हॉट एक्सेल, ब्रेक बाइंडिंग, दरवाजा खुलना एवं असमान लोडिंग से बचाव के लिए कैरिज एवं वैगन कर्मचारी, चालक दल, ट्रेन प्रबंधक एवं स्टेशन कर्मचारियों द्वारा की जानेवाली जांच, हाल ही में हुई दुर्घटनाओं का विश्लेषण, संरक्षा के क्षेत्र में राजभाषा हिंदी की भूमिका, प्राथमिक उपचार पेटी का प्रदर्शन तथा अग्निशामक यंत्र का उपयोग एवं प्रदर्शन।

इस संरक्षा सेमिनार में श्री सुरेश चन्द्र, वरिष्ठ मंडल संरक्षा अधिकारी/रायपुर के साथ-साथ श्री त्रिनाथ मोहंती, संरक्षा सलाहकार/ विद्युत, श्री भूपेश साहू, संरक्षा सलाहकार/यांत्रिक, श्री उमाकांत धकाते, संरक्षा सलाहकार/परिचालन, श्री हरीश चन्द्र कर, संरक्षा सलाहकार/ विद्युत, श्री सुनील कुमार साहू, संरक्षा सलाहकार/ सिग्नल एवं दूरसंचार तथा डॉ. कमल, अनुवादक/ राजभाषा ने संरक्षा सेमिनार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। संरक्षा संगठन/रायपुर मंडल के द्वारा प्रत्येक माह में 02 संरक्षा संगोष्ठी का आयोजन रायपुर मंडल के विभिन्न स्टेशनों में किया जाता है, जिससे कर्मचारियों में कार्य करने के दौरान संरक्षा के प्रति जागरुकता लाई जा सके। उक्त संरक्षा संगोष्ठी में संरक्षा सलाहकार, सुपरवाइजर, एवं फील्ड कर्मचारियों को मिलाकर कुल 58 लोगों ने भाग लिया।

# सड़क किनारे अवैध रूप से बिल्डिंग मटेरियल, गुमटी रखने वाले व्यापारी पर निगम की टीम ने की कार्यवाही




**भिलाईनगर ( विश्व परिवार )।** नगर पालिक निगम भिलाई के जोन क्रमांक 01 अंतर्गत हुड़को क्षेत्र में दिव्या कन्सट्रक्शन स्टील सप्लायर द्वारा सामग्री रखकर व्यापार किया जा रहा था। स्थानीय निवासियो द्वारा शिकायत की गई, जिसके आधार पर कलेक्टर महोदया सुश्री ऋचा प्रकाश चैधरी के निर्देश पर आयुक्त राजीव कुमार पाण्डेय ने जोन 01 के अधिकारियो को निर्देशित किए, कि स्थल का जांच करे। राजस्व की टीम मौके पर पहुंची और जांच के दौरान देखा की दिव्या कन्सट्रक्शन के संचालक द्वारा सड़क किनारे सामग्री रखकर विक्रय किया जा रहा है। नगर निगम का दल पहुचने से पहले ही सप्लायर दुकान बंद करके भाग गया।

कार्यपालक मजिस्टेड फुलेश्वरनाथ खुटे, जोन आयुक्त कुलदीप गुप्ता के उपस्थिति में मौके पर पंचनामा बनाकर बिल्डिंग मटेरियल सामग्री को जप्त किया गया। इसी प्रकार जोन क्रमांक 04 शिवाजी नगर क्षेत्र वार्ड 41 छावनी लक्ष्मण नगर, ट्रान्सपोर्ट नगर पहुंच मार्ग के समीप अवैध रूप से संचालित गुमटियों को पुलिस बल, जोन आयुक्त सतीश यादव की उपस्थिति में बेदखली की कार्यवाही कर गुमटियों को हटवाया गया।

कार्यवाही के दौरान कार्यपालन अभियंता अनिल सिंह, सहायक राजस्व अधिकारी अनिल मेश्राम, बालकृष्ण नायडू, तोड़फोड़ दस्ता प्रभारी हरिओम गुप्ता, पुलिस विभाग से सहायक निरीक्षक भूपेन्द्र यादव एवं निगम के स्वास्थ्य विभाग से सागर दुबे, प्रहलाद लहरी, दुर्याधन साहू, गणित बद्येल, कन्हैया यादव, गौकरण कुर्रे, खेमलाल आदि उपस्थित रहे।

# राजधानी की सड़कों पर पैदल निकले कलेक्टर व एसपी, ट्रैफिक बाधित करने पर की कार्रवाई

**रायपुर ( विश्व परिवार )।** राजधानी रायपुर की प्रमुख सड़कों का जायजा लेने के लिए आज दोपहर बाद कलेक्टर डॉ. गौरव सिंह एवं एसपी डॉ. लाल उम्मेद सिंह पैदल निकले। शहर में बढ़ते यातायात के दबाव को कम करने एवं दुर्घटनाओं में कमी लाने के लिए आवश्यक निर्देश दिए गए। पैदल सड़कों पर निकले कलेक्टर एवं एसपी के निर्देश पर सड़कों के किनारे नो-पार्किंग जोन में खड़ी वाहन, गुमटी एवं ठेलों को प्रहरी टीम के माध्यम ने तत्काल हटाने की कार्रवाई की। साथ ही जिन चौक- चौराहों पर रोटरी नहीं लगे हैं, उन स्थानों पर अस्थायी रोटरी लगाने के निर्देश दिए है। इसके अलावा सड़कों के गड्ढे एवं पेंचवर्क को जल्द से जल्द पूरा करने के निर्देश दिए गए।


## कार्यालय, नगर पालिक निगम, रायपुर (छ.ग.)

नया मुख्यालय भवन गांधी चौक रायपुर फोन नं. 2535780, 90
फैक्स 0771-2227395 E-mail ee.electrical.rmci@gmail.com

### निविदा आमंत्रण सूचना

क्रमांक/370/ विद्युत/न.पा.नि./2024 दि 26/12/2024

नगर पालिक निगम, रायपुर, विद्युत विभाग द्वारा निम्नांकित कार्य हेतु संबंधित फर्म/एजेंसियो से मुहरबंद निविदायें दो लिफाफा पद्धति के माध्यम से स्पीड पोस्ट से दिनांक 15/01/2025 को संध्या 4:00 बजे तक आमंत्रित की जाती है, प्राप्त सभी निविदाएँ उपस्थित निविदाकारों अथवा उनके अधिकृत प्रतिनिधियों के सम्मुख दिनांक 16/01/2025 को संध्या 05:00 बजे खोली जाएगी । निविदा प्रपत्र-एबीसी निर्धारित राशि रू. 750.00 जमा कर दिनांक 15/01/2025 तक नगर पालिक निगम विद्युत विभाग, मुख्यालय से कार्यालीन समय में प्राप्त की जा सकती है।

| क्र. | कार्य का विवरण | अनुमानित लागत राशि रू. | अमानती राशि (रू.) |
|---|---|---|---|
| 1 | सड़कबत्ती के सुचारू रूप से संचालन हेतु टर्मिनल बाक्स क्रय किये जाने बाबत। | 294382.00 | 8840.00 |
| 2 | सडकबत्ती संधारण कार्य हेतु एमसीबी एवं मेन स्वीच क्रय करने बाबत। | 501024.00 | 15040.00 |

घरो से निकलने वाले सूखा और गीला कचरे को सफाई मित्र (वाहन) को देवें।

कार्यपालन अभियंता विद्युत
नगर पालिका निगम, रायपुर

## कार्यालय सम्पदा अधिकारी, छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल, सम्पदा प्रबंधन प्रक्षेत्र-03, सेजबहार, रायपुर

(छ.ग.)फोन नं.-0771-2991574
Email Id: eocghbzone03@gmail.com

### आम-सूचना

सर्वसाधारण को सूचित किया जाता है कि सामान्य **आवास योजनांतर्गत बोरियाकला** रायपुर में स्थित भवन **क्रमांक पीपल II/63, श्री ललित सहगल पिता श्री आर.एल. सहगल,** के नाम पर आबंटित है। आबंटी द्वारा उक्त भवन का पूर्ण मूल्य जमा कर अपने पक्ष में **दिनांक 11.03.2014** को लीजडीड पंजीकृत उपरांत आधिपत्य आदेश प्राप्त कर लिया है। आबंटी द्वारा **दिनांक 11.07.2023** को हस्तांतरण विलेख (फ्री-होल्ड) निष्पादित करा लिया गया है हस्तांतरण विलेख निष्पादन उपरांत आबंटी द्वारा उक्त भवन को **क्रेता श्रीमती सावित्री शर्मा पति श्री कुन्दन शर्मा, निवासी- मकान कमांक ई-102, वी.आई.पी. कालोनी सरकण्डा, बिलासपुर, तहसील व जिला बिलासपुर ( छ.ग. )** के पक्ष में **दिनांक 22.12.2023** को विक्रय कर दिया गया है। वर्तमान में नवीन **क्रेता श्रीमती सावित्री शर्मा पति श्री कुन्दन शर्मा,** द्वारा उक्त भवन को फ्री-होल्ड पश्चात अपने नाम पर मण्डल अभिलेख में दर्ज किये जाने हेतु इस कार्यालय में अपना आवेदन प्रस्तुत किया गया हैं।

अत: उक्त भवन का फ्री-होल्ड उपरांत मण्डल अभिलेख में नाम दर्ज करने के संबंध में किसी व्यक्ति शासकीय व अर्द्धशासकीय संस्था, निकाय, बैंक, अथवा वित्तीय संस्था, को कोई आपत्ति हो तो इस आम सूचना प्रकाशन के 15 दिवस के अन्दर लिखित आपत्ति मय दस्तावेज अधोहस्ताक्षरकर्ता के कार्यालय में प्रस्तुत करें। अन्यथा बाद में प्राप्त होने वाली आपत्ति पर विचार नहीं किया जावेगा।

**सम्पदा अधिकारी,**
**छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल,**
**प्रक्षेत्र-03, सेजबहार, रायपुर छ.ग.**

## कार्यालय, नगर पालिका परिषद जामुल, जिला दुर्ग (छ0ग0)

### ई-प्रोक्योमेंट निविदा सूचना (2nd Call)

क्र. / 11686 / निविदा आमंत्रण / 2024-25 जामुल, दिनांक 27/12/2024

एकीकृत पंजीयन प्रणाली अंतर्गत सक्षम श्रेणी में पंजीकृत ठेकेदारों / मान्यता प्राप्त संस्था से पंजीकृत निर्माता से निर्माण कार्य हेतु ई-प्रोक्योरमेंट निविदा आमंत्रित की जाती है :-

| System Tender No. | System Tender No. | Name of work / Description of work | Probable Amount of contract | Earnest Money Deposit | Bid Due date | Physical sub mission of EMD (FDR) |
|---|---|---|---|---|---|---|
| 01 | 163504 | Construction of Atal Parisar at ACC Bogda Puliya (wnd Call) | Rs. 29.41 Lacs | Rs. 23000.00 EMD (FDR) in favour of Chief Municipal Officer, Municipal Council Jamul, Dist- Durg (C.G.) | 13-01-2025 | Dated 15.01.2025 Time-17.30 |

1. The Details can be viewed and downloaded online directly from the Government of Chhattisgarh e-procurement and Urban Administration and Development Department portal http://eproc.cgstate.gov.in on **27/12/2024 17.30** hours (IST) on wards. For more details on the tender and building process you may please visit the above-mentioned portal.

**Chief Municipal Officer**
**Municipal Council, Jamul**

## कार्यालय, नगर पंचायत उतई, जिला-दुर्ग (छ.ग.)

फोन नंबर 0788-2673701 E-mail-cmoutai@rediffmail.com

क्र. 1949/लो.नि.शा./ निविदा/न.पं./2024 क्रमांक उतई दिनांक 26/12/2024

### ।। मैनुअल पद्धति से प्रथम निविदा आमंत्रण सूचना ।।

एकीकृत पंजीयन प्रणाली अंतर्गत सक्षम श्रेणी में पंजीकृत ठेकेदारों से नगर पंचायत उतई क्षेत्रांतर्गत 15वें वित्त आयोग मद से स्वीकृत राशि 19.95 लाख रु., कुल 01 कार्य हेतु दिनाँक 17/01/2025 को कार्यालयीन अवधि समय 3.00 बजे तक पंजीकृत डाक / स्पीड पोस्ट के माध्यम से तीन लिफाफा पद्धति पर सीलबंद निविदा आमंत्रित की जाती है।

| | | | |
|---|---|---|---|
| 1 | निविदा प्रपत्र हेतु आवेदन प्रस्तुत करने का अंतिम तिथि | - | 10/01/25 को शाम 05:00 बजे तक |
| 2 | कोरा निविदा प्राप्त करने की अंतिम तिथि | - | 13/01/25 को शाम 05:00 बजे तक |
| 3 | निविदा जमा करने की अंतिम तिथि | - | 17/01/25 को दोप. 03:00 बजे तक |
| 4 | निविदा खोलने की अंतिम तिथि | - | 17/01/25 को शाम 04:00 बजे |

निविदा की सामान्य शर्ते, धरोहर राशि, विस्तृत निविदा विज्ञप्ति, निविदा दस्तावेज एवं अन्य जानकारी कार्यालयीन अवधि एवं समय में लोक निर्माण शाखा से अथवा वेबसाईड www.uad.cg.gov.in पर देखी/प्राप्त की जा सकती है।

"अपने घर, आसपास एवं नगर को स्वच्छ रखे, शौचालय का उपयोग करें"
"जल ही जीवन है"

**मुख्य नगर पालिका अधिकारी**
**नगर पंचायत उतई**

## कार्यालय नगर पंचायत कूंरा, जिला रायपुर (छ.ग.)

e-mail - npkunra2016@gmail.com

क्र./2034/लो.नि.वि./ न.पं./2024-25 कूंरा, दिनांक 26.12.2024

### // मैनुअल पद्धति निविदा सूचना //

एकीकृत पंजीयन प्रणाली अन्तर्गत सक्षम श्रेणी में पंजीकृत ठेकेदारों से लो.नि.वि. एस.ओ.आर. 01.01.2015 (भवन/सड़क) से प्रभावशील एस.ओ.आर. दर से कम/अधिक या सामान दर पर निम्नलिखित निर्माण कार्य हेतु दिनांक 20. 01.2025 अपरान्ह 4:00 बजे तक पंजीकृत डाक / स्पीड पोस्ट द्वारा त्रि लिफाफा पद्धति से निविदा आंमत्रित की जाती है।

1. निविदा प्रपत्र हेतु आवेदन करने की अंतिम तिथि व समय - 10.01.2025 अपरान्ह 3:00 बजे तक
2. परीक्षण उपरांत निविदा प्रपत्र जारी करने की तिथि व समय - 14.01.2025 अपरान्ह 5:00 बजे तक
3. स्पीड पोस्ट / पंजीकृत डाक द्वारा कार्यालय में निविदा प्राप्त होने की अंतिम तिथि व समय - 20.01.2025 अपरान्ह 4:00 बजे तक
4. निविदा प्रपत्र खोलने की तिथि व समय - 21.01.2025 कार्यालयीन समय तक

| स. क्रं. | कार्य का नाम | निविदा राशि (लाख में) | अमानत राशि (रूपये में) | प्रपत्र | निविदा प्रपत्र शुल्क (रूपये में) | कार्य पूर्ण करने हेतु समयावधि |
|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | स्वच्छ भारत मिशन अंतर्गत वार्ड क्रं. 13 में स्थित 01 नग सार्वजनिक /सामुदायिक शौचालय मरम्मत / उन्नयन कार्य। | 3.93 | 4000/- | "A" | 750/- | 03 माह |

उपरोक्त निविदा की सामान्य शर्ते, धरोहर राशि, विस्तृत निविदा विज्ञप्ति, निविदा दस्तावेज एवं अन्य जानकारी कार्यालय से अथवा विभागीय वेबसाइट **www.uad.cg.gov.in** में देखी जा सकती है।

**मुख्य नगरपालिका अधिकारी**
**नगर पंचायत कूंरा**

## दक्षिण पूर्व मध्य रेलवे

### इंजीनियरिंग कार्य हेतु ई-निविदा सूचना

**क्र.संख्या (1) ई-निविदा संख्याः डीआरएम - इंजी.-बीएसपी-टी-122-24-25, दिनांकः 23.12.2024.**
**कार्यः** वरिष्ठ मंडल अभियंता/मध्य/ बिलासपुर के अधिकार क्षेत्र के अंतर्गत पुलों में स्टेनलेस स्टील चेकर्ड प्लेट का प्रावधान। **निविदा मूल्यः ₹ 1,49,34,508.82. अमानत राशिः ₹ 2,24,700.00. कार्य पूर्णता की अवधिः** 12 माह।

**निविदा जमा करने की आरंभ तिथिः 06.01.2025 के 11.00** बजे से। **निविदा जमा करने की अंतिम तिथिः 20.01.2025 के 11.00** बजे तक।

उपरोक्त ई-निविदा सूचना की पूरी जानकारी वेबसाइट **https://www.ireps.gov.in** पर उपलब्ध है। उपरोक्त निविदा हेतु ई-टेन्डर के अलावा अन्य निविदा स्वीकार नही की जाएगी।

*मंडल रेलवे प्रबंधक(अभियंता)/*
*सीपीआर/10/409 द.पू.म.रे.,बिलासपुर*

South East Central Railway @secrail

## कार्यालय, नगर पालिक निगम, भिलाई (संपत्तिकर विभाग)

क्रमांक/चार/तीन/सं.क.वि./2024/742/261 भिलाई, दिनांक 20/12/2024

### // स्वामित्व के हस्तांतरण की सूचना //

३इस ईश्तहार द्वारा हित रखने वाले हितग्राही को एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 में स्वत्वाधिकार के अंतरण के संबंध में निम्नलिखित हस्तांतरिती के नाम से जिसका कि नगर पालिक निगम भिलाई के संपत्तिकर अभिलेख में हस्तांतरणकर्ता के स्थान पर नाम दर्ज किया जाना है यदि किसी को इस संबंध में कोई आपत्ति हो तो प्रकाशन तिथि से 15 दिनों के भीतर अधोहस्ताक्षरकार्ता के समक्ष आपत्ति प्रस्तुत कर सकते है बाद में प्रस्तुत आपत्ति पर विचार नही किया जावेगा:-

| क्र. | हस्तांतरणकर्ता का नाम | हस्तांतरिती का नाम | हस्तांतरण का स्वरूप | संपत्ति की स्थिति |
|---|---|---|---|---|
| 1 | श्री दामोदर पिता श्री शिवाप्पा हरने, निवासी 690, स्ट्रीट नं.-8, वार्ड न.- 11. शांति नगर, सुपेला, भिलाई नगर, तह. व जिला- दुर्ग (छ.ग.) | शुभांगी हरने, पिता-दामोदर हरने, निवासी 690, स्ट्रीट नं.-8, वार्ड नं. 11. शांति नगर, सुपेला, भिलाई नगर, तह. व जिला दुर्ग (छ.ग.) | दानपत्र | कोहका, वार्ड क्र.-11 अंबेडकर नगर वार्ड, (शांति नगर) अंदर भाग भिलाई, खसरा नं.- 6437 (प्लाट नं.-57 एवं 58), रकबा - 3000 वर्गफुट, आवासीय भवन निर्मित। |
| 2 | बी एण्ड एस रियल्टर्स प्रा. लि. (ओक युड ग्रीन्स) डायरेक्टर- हरबक्श सिंह बत्रा, पिता श्री गुरुबक्श सिंह बत्रा, निवासी गोविंद धाम, सिविल लाईन, वार्ड नं.-42, रायपुर, तह. व जिला रायपुर (छ.ग.) अधिकृत मिरजा रोशन बैग, पिता श्री मिरजा मोहम्मद बैग, निवासी 108/1, मोहन नगर, वार्ड नं.-13, दुर्ग, तह. व जिला- दुर्ग (छ.ग.) | श्रीमती निशा कटारे वर्मा, पिता श्री बाबुराम, निवासी म. नं. 11/5,मोती लाल नेहरू नगर वेस्ट भिलाई. तह. व जिला दुर्ग (छ.ग.) | बिक्रीनामा | जुनवानी, वार्ड क्रं.-02, स्मृति नगर वार्ड भिलाई (जुनवानी चौक से चिखली नाला धमधा रोड की ओर अंदर भाग) भिलाई, खसरा नं.- 20/1. प्लाट नं. 24, रकबा 1292 वर्गफीट, आवासीय भवन निर्मित। |
| 3 | "चौहान हाउसिंग" (चौहान ग्रीन वैली) अपोजिट चौहान टाउन, जुनवानी, भिलाई, प्रोपराईटर श्री अजय चौहान आ. स्व. श्री विपत (दीपेश्वर) चौहान, निवासी राजीव नगर, भिलाई तह. व जिला-दुर्ग (छ.ग.) | श्री पुलकित शर्मा, श्री प्रमोद शर्मा, निवासी 54/496, शांति विहार कॉलोनी, रायपुर, तह. व जिला- रायपुर (छ.ग.) | बिक्रीनामा | वार्ड नं. 01. "चौहान हाउसिंग" चौहान ग्रीन वैली, खम्हरिया जुनवानी भिलाई, पलैट नं.- 47 छटवा तल, ब्लॉक नं.- डी 4. क्षेत्रफल 663.27 वर्गफीट पर आवासीय फ्लैट निर्मित। |
| 4 | "चौहान हाउसिंग" (चौहान ग्रीन वैली) अपोजिट चौहान टाउन, जुनवानी, भिलाई, प्रोपराईटर श्री अजय चौहान आ. स्व. श्री विपत (दीपेश्वर) चौहान, निवासी राजीव नगर, भिलाई तह, व जिला-दुर्ग (छ.ग.) | श्री महेन्द्र कुर्रे, आ. स्व. टी.आर. कुर्रे, निवासी 27, वर्धमान ग्रीन सिटी, बाय पास रोड, अयोध्या नगर (भोपाल) | बिक्रीनामा | वार्ड नं.- 01. चौहान हाउसिंग" चौहान ग्रीन वैली, खम्हरिया जुनवानी भिलाई, फ्लैट नं.- 17 तृतीय तल, ब्लॉक नं.- डी 3. क्षेत्रफल 663.27 वर्गफीट पर आवासीय फ्लैट निर्मित। |
| 5 | श्री सुयश तिवारी, पिता-डॉ. नरेश कुमार तिवारी, निवासी म. नं.-184/क, वार्ड-08, पुराना बस स्टैण्ड चौक रायपुर रोड, बेमेतरा, तह व जिला बेमेतरा (छ.ग.) | श्रीमती शांति मिश्रा, पति भी राकेश मिश्रा, निवासी क्वा, नं.-5 डी, सड़क-08, सेक्टर-08 भिलाई तह. व जिला दुर्ग (छ.ग.) | बिक्रीनामा | कोहका, फरीद नगर वार्ड क - 07. शिक्षक नगर (कान्हा पार्क प्लाट नं.-17) अंदर भाग भिलाई, खसरा नं. 1687/27, प्लाट नं-17, रकबा 137.25 वर्गमीटर, आवासीय भवन निर्मित। |
| 6 | श्री ए. जे. जोश पिता के. वी. जोसफ निवासी एल.आई.जी.-12, सी.जी. हाउसिंग बोर्ड, कैलाश नगर, कुरुद भिलाई, तह. व जिला दुर्ग (छ.ग.) | श्री बी. राम कृष्णा पिता बी. श्रीनिवास राव, निवासी- 34, जोन-3 सेक्टर-11 न्यू तेलगु नगर, खुर्सीपार, भिलाई, तह, व जिला दुर्ग (छ.ग.) | बिक्रीनामा | कुरूद, सुन्दर विहार, पुरानी बस्ती (वार्ड नं-16), अदर भाग भिलाई, प्लाट नंबर-256, खसरा नं- 1420/173, क्षेत्रफल- 1500 वर्गफीट, आवासीय भवन निर्मित। |

**उपायुक्त ( संपत्तिकर )**
**नगर पालिक निगम**
**भिलाई**

## कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-7)

मंगलम काम्प्लेक्स अग्रसेन चौक, रायपुर
E-mail ID - rmczone7@gmail.com

पत्र क्र./16718/ न.पा.नि./जोन क्र.-7/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

### इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16718**
**वार्ड का नाम-24-सरदार वल्लभ भाई पटेल वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 24 स्थित/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR818B0103A** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **DURGA BAI** पिता/पति, श्री/श्रीमती **PARMANAND** के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **डिकेश्वरी साहू** पिता/पति, श्री/श्रीमती **जीवन साहू** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **पंजीकृत विक्रय विलेख**/ वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री श्रीमती प्रीति सिंह**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-7**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

## कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-8)

मोहबा बाजार, रायपुर
E-mail ID - rmczone8@gmail.com

पत्र क्र. /16961/ न.पा.नि./जोन क्र.-8/2024
रायपुर, दिनांक 27-12-2024

### इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16961**
**वार्ड का नाम- 01 - वीर सावरकर नगर वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 01 स्थित भवन/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR801F0002A** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **AMIT KUMAR SIHAG** पिता/पति, श्री/श्रीमती .... के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **1.MANJU SIHAG W/O LT. AMIT KUMAR SIHAG 2. GAURAV KUMAR S/O LT. AMIT KUMAR SIHAG 3. SANVI KUMARI D/O LT. AMIT KUMAR SIHAG** पिता/पति, श्री/श्रीमती ... ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ .... / वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री आदित्य कुमार हालदार**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-8**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

## कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-8)

मोहबा बाजार, रायपुर
E-mail ID - rmczone8@gmail.com

पत्र क्र. /16977/ न.पा.नि./जोन क्र.-8/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

### इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16977**
**वार्ड का नाम- 01 - वीर सावरकर नगर वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 01 स्थित भवन/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR801O00237** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **RANJU GUMAN SINGH** पिता/पति, श्री/श्रीमती **PADAMCHARAN SINGH** के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **SUJIT KUMAR SINGH** पिता/पति, श्री/श्रीमती **LT. DEEPNARAYAN SINGH** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **पंजीकृत विक्रय विलेख**/ वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री आदित्य कुमार हालदार**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-8**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

## कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-8)

मोहबा बाजार, रायपुर
E-mail ID - rmczone8@gmail.com

पत्र क्र. /16974/ न.पा.नि./जोन क्र.-8/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

### इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16974**
**वार्ड का नाम- 01 - वीर सावरकर नगर वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 01 स्थित भवन/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR801L00040** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **GITANJALI KHERA**पिता/पति, श्री/श्रीमती **SIDDHARTH KHERA** के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **SUNITA PRADHAN** पिता/पति, श्री/श्रीमती **LT. DEVENDRA NATH PRADHAN** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **पंजीकृत विक्रय विलेख**/ वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री आदित्य कुमार हालदार**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-8**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

## कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-8)

मोहबा बाजार, रायपुर
E-mail ID - rmczone8@gmail.com

पत्र क्र. /16960/ न.पा.नि./जोन क्र.-8/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

### इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16960**
**वार्ड का नाम- 69 - माधवराव सप्रे वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 69 स्थित भवन/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR568B1055A** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **SUKHCHAND GIREPUNJE** पिता/पति, श्री/श्रीमती **RAMCHAND GIREPUNJE** के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **1. SMT DOLLY TIWARI 2.JAINENDRA KUMAR TIWARI** पिता/पति, श्री/श्रीमती **1. JAINENDRA KUMAR TIWARI 2. AMARNATH TIWARI** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **पंजीकृत विक्रय विलेख**/ वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री आदित्य कुमार हालदार**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-8**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

www.dainikvishwapariwar.com
vishwapariwarraipur@gmail.com

दैनिक
# विश्व परिवार

बिलासपुर संभाग

रायपुर शनिवार 28 दिसंबर 2024



# दसवीं बारहवीं सत्र 2023 -24 में कम अंक आने वाले विद्यालय प्राचार्यों का समीक्षा बैठक हुई

**सूरजपुर ब्यूरो( दैनिक विश्व परिवार )**-आज शासकीय बालक उच्चतर माध्यमिक विद्यालय सूरजपुर के सभाकक्ष में विकासखंड सूरजपुर के सभी संकुल केंद्र समन्वयक एवं 10वीं और 12वीं में सत्र 2023 -24 में औसत से कम प्रदर्शन करने वाले विद्यालय के प्राचार्यों की समीक्षा बैठक सूरजपुर एसडीएम शिवानी जायसवाल,जिला शिक्षा अधिकारी राम ललित पटेल, जिला मिशन समन्वयक शशिकांत सिंह, सहायक संचालक रविंद्र सिंह देव,विकासखंड शिक्षा अधिकारी सुनील कुमार पोर्ते, विकासखंड स्रोत समन्वयक मनोज कुमार मंडल और सहायक विकास खंड शिक्षा अधिकारी गिरवर यादव की उपस्थिति में हुआ। बैठक में मुख्य रूप से यू डाइस पोर्टल, अपार आईडी जनरेशन, परीक्षा पे चर्चा,जाति प्रमाण पत्र, तंबाकू मुक्त शैक्षणिक संस्था,हाई स्कूल और हायर सेकेंडरी स्कूलों के परीक्षाफल में सुधार, विद्यालयों की रंगाई पुताई के संबंध में विस्तार से चर्चा की गई। जिला शिक्षा अधिकारी राम ललित पटेल और जिला मिशन समन्वयक शशिकांत सिंह के द्वारा एक-एक संकुल के संकुल समन्वयक से उनके संकुल के स्थिति के बारे जानकारी जानकारी प्राप्त कर उसमें अपेक्षित तीव्र सुधार हेतु कहा गया।

**बैठक में एसडीएम शिवानी जायसवाल भी शामिल हुई**- उक्त बैठक में सूरजपुर एसडीम शिवानी जायसवाल भी उपस्थित रही और संबंधित विद्यालय के प्राचार्यों से उनके विद्यालय के रिजल्ट की समीक्षा करने के पश्चात संबंधित प्राचार्य और संकुल समन्वयक को योजना बनाकर परीक्षा परिणाम में सुधार करने हेतु निर्देशित किया गया साथ ही जाति प्रमाण पत्र बनवाने में जो भी दिक्कतें आ रही हैं उन दिक्कतों का समाधान उनके द्वारा बताया गया और उन्हें दूर करने का आश्वासन दिया गया।

बैठक के अंत में पूर्व प्रधानमंत्री आदरणीय मनमोहन सिंह जी एवं हायर सेकेंडरी स्कूल केतका में पदस्थ व्याख्याता आशीष बोटकेवार के निधन पर शोक प्रकट करते हुए 2 मिनट का मौन रखकर श्रद्धांजलि अर्पित की गई। बैठक में सूरजपुर बीआरपी सुदर्शन राजवाड़े, रोहित कुशवाहा के साथ-साथ सभी संकुलों के संकुल समन्वयक और प्राचार्य उपस्थित रहे।

## संक्षिप्त समाचार

### बावन परियों का आनंद उठाते 92 हजार 9 सौ 70 रूपये के साथ गिरफ्तार

**गौपाल सिंह विद्रोही**

**सूरजपुर ब्यूरो( दैनिक विश्व परिवार )**-वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक सूरजपुर प्रशांत कुमार ठाकुर के निर्देश पर जिले की पुलिस अवैध कार्यो के विरूद्ध कार्यवाही करने में लगी है। इसी कड़ी में 26 दिसंबर की रात्रि में थाना सूरजपुर पुलिस को मुखबीर से सूचना मिला कि ग्राम धनेशपुर में जुआड़ी हारजीत का दाव लगाकर जुआ खेल रहे है। सूचना से एसएसपी सूरजपुर को अवगत कराए जाने पर उन्होंने पूर्ण सावधानी के साथ कार्यवाही करने के निर्देश दिए। थाना सूरजपुर की पुलिस टीम के द्वारा ग्राम धनेशपुर में घेराबंदी कर 6 जुआड़ी (1) गनपत पिता गोविन्द्र प्रसाद उम्र 30 वर्ष ग्राम शिवपुर, थाना रामानुजनगर (2) संकलित साहू पिता स्व. जयलाल साहू उम्र 34 वर्ष ग्राम उमापुर, थाना रामानुजनगर (3) बाबुनाथ कुशवाहा पिता स्व. हीराधन उम्र 45 वर्ष ग्राम भुनेश्वरपुर, थाना रामानुजनगर (4) श्यामले राजवाड़े पिता कोमल उम्र 33 वर्ष ग्राम मांजा, थाना रामानुजनगर (5) ज्ञानेन्द्र साहू पिता तिलकधारी साहू उम्र 35 वर्ष ग्राम खाड़ा, थाना पटना, जिला कोरिया (6) विवेक मिश्रा पिता बालमिकी उम्र 30 वर्ष निवासी ग्राम महलपारा, थाना बैकुण्ठपुर, जिला कोरिया को जुआ खेलते रंगे हाथों धर दबोचा, जुआड़ियों के पास व जुआ फड़ से 92970 रूपये जप्त किया गया। मौके से जुआड़ियों के 5 नग मोबाईल, 3 नग मोटर सायकल भी जप्त किया गया है। मामले में छत्तीसगढ़ जुआ प्रतिषेध अधिनियम 2022 की धारा 3(2) के तहत कार्यवाही कर आरोपियों को गिरफ्तार किया है। कार्यवाही अतिरिक्त पुलिस अधीक्षक संतोष महतो व सीएसपी एस.एस.पैंकरा के मार्गदर्शन में थाना सूरजपुर की पुलिस टीम के द्वारा की गई।

# वार्ड 07 में पार्षद के भाई ने एक समाज को वोट के लिए दी धमकी-चमकी

### आक्रोशित लोग बड़ी संख्या में पहुंचे कोतवाली, शिकायत दर्ज

**कोरबा(विश्व परिवार)।** नगरीय निकाय चुनाव के लिए वार्डों का आरक्षण कर दिया गया है जबकि महापौर और अध्यक्ष के पदों के लिए लॉटरी की प्रक्रिया 27 दिसंबर को होगी। चुनाव कब होंगे, इसके लिए तिथि की घोषणा निर्वाचन आयोग ने नहीं की है। इससे पहले ही संभावित दावेदार तैयारी में जुट गए हैं। वहीं अपनी जीत पक्की करने के लिए कुछ स्थानों पर धमकी-चमकी और मारपीट भी शुरू हो गई है। मोतीसागर पारा में ऐसे ही मामले को लेकर काफी लोग पिछली रात कोतवाली थाना पहुंचे और स्थानीय पार्षद के भाई के खिलाफ शिकायत कराई। नगर पालिक निगम कोरबा के वार्ड क्रमांक 7 से बीते चुनाव में कांग्रेस के संतोष लांझेकर निर्वाचित हुए थे। उनका कार्यकाल बीतने को है। नए आरक्षण के अंतर्गत एक बार फिर इस वार्ड को आरक्षित किया गया है। पिछले चुनाव के दौरान प्रदेश में कांग्रेस की सत्ता थी जबकि अब हालात बदल गए हैं। ऐसे में भाजपा के कार्यकर्ताओं का पलड़ा भारी नजर आ रहा है। इस वार्ड से चुनाव लडने को लेकर कई लोग कोशिश में जुटे हैं। पार्षद किसे चुनना है यह लोगों का अपना विवेक है और वे सही समय पर इसका निर्णय लेंगे। खबर के अनुसार चुनाव से पहले ही वार्ड में अपनी धमक बनाने और परिणाम को अपने पक्ष में करने के लिए कई लोग उल्टी-सीधी कोशिश में लगे हुए हैं। बंगाली हलदार समाज के साथ इस चक्कर में रात्रि को घटना हो गई। नाराज समाज के लोग कोतवाली थाना पहुंच गए। सूत्रों के अनुसार वार्ड के पार्षद के लिए उसके भाई के द्वारा अभी से लॉबिंग शुरू कर दी गई है और इसके लिए कई तरीके अमल में लाए जा रहे हैं। आरोप है कि उसके द्वारा अपने मोहल्ले में रह रहे लोगों को धमकाया गया कि उन्हें हर हाल में अपने भाई के लिए काम करना होगा और वोट देना होगा। ऐसा नहीं होने पर चुनाव के बाद उनकी वाट लगा दी जाएगी। धमकी से आक्रोशित लोगों ने कोतवाली थाना पहुंचकर इस आशय की शिकायत दर्ज कराई।

## सरायपाली तहसील में अवैध धान संग्रहण पर बड़ी कार्रवाई 1035 बोरा धान जब्त

**महासमुंद(विश्व परिवार)।** कलेक्टर विनय कुमार लंगेह के निर्देशन में जिले में अवैध धान भंडारण के विरूद्ध सतत कार्रवाई जारी है। इसी कड़ी में मंगलवार को सरायपाली तहसील के विभिन्न गांवों में राजस्व व मंडी विभाग के अधिकारियों ने अवैध रूप से संग्रहित धान और चावल के खिलाफ बड़ी कार्रवाई करते हुए 1035 बोरा अवैध धान जब्त किए हैं। जिसमें ग्राम कोइलबहार में उत्तम प्रधान के घर से 66 बोरा अवैध धान बरामद किया गया। इसी गांव में दीपक साहू के गोदाम में 177 बोरा धान अवैध रूप से संग्रहित पाया गया। प्रशासन ने इसे तुरंत जब्त कर गोदाम को सील कर दिया। ग्राम सिंगबहाल में गजपति साव के घर से 220 कट्टा अवैध धान बरामद हुआ, जिसे अधिकारियों ने तुरंत अपने कब्जे में ले लिया। वहीं, ग्राम कुटेला में भी बड़े स्तर पर अवैध भंडारण का मामला सामने आया। उत्तम साहू के गोदाम से 180 कट्टा अवैध धान और 30 कट्टा पी.डी.एस. चावल जब्त किया गया। कुटेला में ही नरेश साहू के गोदाम से 186 कट्टा अवैध धान जब्त हुआ। इसी प्रकार ग्राम बलोदा में दीपक अग्रवाल के गोदाम से 206 कट्टा अवैध धान बरामद किया गया। राजस्व व मंडी विभाग के अधिकारियों ने बताया कि यह कार्रवाई राज्य सरकार के दिशा-निर्देशों के तहत की गई है, जो मंडी अधिनियम और कृषि उपज व्यापार में पारदर्शिता बनाए रखने के लिए लागू हैं।

## शासकीय कन्या महाविद्यालय में भाषण प्रतियोगिता का हुआ आयोजन

**सूरजपुर(विश्व परिवार)।** भारत का गौरवशाली इतिहास रहा है। आन, बान और शान की रक्षा के लिए भारत देश के वीर बाँकुरे हमेशा सजग रहते हैं। दसवें गुरु गोविंद सिंह के दो पुत्रों छः साल के फतेह सिंह और नौ साल के जोरावर सिंह ने पराधीनता के बदले दीवार में चुनना पसंद किया। सच्चे मायने में ये हमारे वीर बाल रहे हैं और रहेंगे। उनकी शहादत को समूचा विश्व आज नमन कर रहा है।कोरबा, 26 दिसम्बर (अअरएनएस)। उक्ताशय के विचार शासकीय कन्या महाविद्यालय सूरजपुर के प्राचार्य बृजलाल साहू ने महाविद्यालयीन सभागार में विद्यार्थियों के समक्ष व्यक्त किये। शासन के निर्देशानुसार भाषण प्रतियोगिता हुई। जिसमें बी.कॉम की छात्रा उपासना गोयल, बी.ए. की छात्रा संगीता यादव और रीता सिंह ने क्रमशः प्रथम, द्वितीय और तृतीय स्थान प्राप्त किया। प्रोजेक्टर के माध्यम से लघुवृत्त चित्र, छत्तीसगढ़ वंदना और राष्ट्रगान की मोहक प्रस्तुति भी हुई। इस अवसर पर संदीप कुमार सोनी, पूजांजलि भगत, दिवाकर सेठी, टमलेश्वर राजवाड़े सहित विभिन्न संकायों की छात्राओं की सहभागिता सराहनीय रही। कार्यक्रम का सफल संचालन राजनीति विज्ञान के विभाग प्रमुख पुनीत गुप्ता ने किया।

# बांगो में खूब चला मनरेगा के नाम पर फर्जीवाड़ाः रोजगार सहायक सहित कर्मचारी, अधिकारी संदेह के दायरे में

### सड़क, शौचालय, डबरी में फर्जी बिल भुगतान

**कोरबा(विश्व परिवार)।** कोरबा जिले के पोड़ी-उपरोड़ा विकासखण्ड अंतर्गत बांगो पंचायत में मनरेगा से विकास के नाम पर बड़ा खेल हुआ है। महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा) का सोशल ऑडिट में रुपये देकर अपने घर मे बैठकर मनमाना पॉजिटिव रिपोर्ट बनवाने का मामला उजागर होने के बाद दुबारा ऑडिट में गड़बड़ी पकड़ी गई है। अब यह तो अधिकारी तय करेंगे कि कौन रिपोर्ट गलत है और कौन सही ?पोड़ी उपरोड़ा विकासखंड के प्रत्येक ग्रामो मे सोशल ऑडिट का कार्य चल रहा है। गांव मे मनरेगा के तहत हुए कार्यो का भौतिक सत्यापन किया जा रहा है वहीं सभा कर उक्त कार्यो पर कमियों को ग्रामीणों व पंचो को बताया जा रहा, लेकिन इसके विपरीत ग्राम पंचायत बांगो मे रोजगार सहायक के द्वारा बड़ा खेल किया जा रहा है। ना ही सही से जांच की जा रही ना ही सभा आयोजित की जा रही। कुछ दिन पूर्व ही बांगो में सोशल ऑडिट कर्मचारी भौतिक सत्यापन करने पहुचे थे। कार्यों का सत्यापन तो किया गया लेकिन सभी फर्जी सत्यापन किये गये। मनरेगा के तहत जितने काम हुए हैं खुलकर भ्रष्टाचार किया गया जबकि ऑडिटर ने सभी काले कारनामों को छिपाते हुए सब सही दर्शा दिया गया। उक्त सभी कारनामो का खुलासा तब हुआ जब ग्रामीणों ने गांव में पुन: आडिट कराने की मांग की। जिले के सोशल आडिट अधिकारियों ने खुद सत्यापन की जांच की तो पता चला कि रोजगार सहायक ने मनमाना तरीके से फर्जी बिल लगाया था।जो काम हुए ही नहीं उसके भी लाखों के भुगतान किये गए वहीं वर्तमान में शौचालय के नाम से भी राशि आहरण की गई। बांगो में मनरेगा के तहत किए गए कार्यों की गुणवत्ता खराब निकली जिससे निर्धारित बजट का बड़ा हिस्सा भ्रष्टाचार में चला गया। कई परियोजना के लिए फर्जी मस्टर रोल बनाए गए, जिनमें गलत तरीके से मजदूरी भुगतान किया गया। सोशल आडिट में सत्यापन के दौरान जांच हुई जिसमें 40 शौचालय की पात्रता थी और पास हुआ 36 शौचालय, वहीं जांच में 6 फर्जी शौचालय पाए गए, जिनके घर शौचालय ही नहीं बना। पूर्व के सभी 36 शौचालय भी अधूरे हैं जिनका फर्जी जियो टैग कर सभी राशि आहरण की गई। डबरी निर्माण कार्य में मस्टर रोल फर्जी बनाया गया।

## मामूली बात पर पत्नी की हत्या करने वाला आरोपी पति पुलिस के चंगुल में

**सूरजपुर ब्यूरो ( दैनिक विश्व परिवार )**-ग्राम पिऊरी, थाना रामानुजनगर निवासी रमेश सिंह पिता बनारसी सिंह ने थाना प्रेमनगर में रिपोर्ट दर्ज कराया कि 25दिसंबर की रात्रि करीब 8-9 बजे उदयराज सिंह के द्वारा अपनी पत्नी लीलावती को खाना नहीं बनाने की बात को लेकर लोहे के राड से मारपीट किया तब उसका लड़का व भतीजा के द्वारा लीलावती को हास्पिटल ले जाने को बोले तो उनको धमका कर ले जाने से मना कर दिया, सुबह लीलावती की मृत्यु हो गई। प्रार्थी की सूचना पर मर्ग कायमी उपरान्त अपराध क्रमांक 138/24 धारा 103(1) बीएनएस के तहत अपराध पंजीबद्ध किया गया। मामले की सूचना पर वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक सूरजपुर श्री प्रशांत कुमार ठाकुर ने आरोपी को जल्द गिरफ्तार करने के निर्देश दिए। थाना प्रेमनगर की पुलिस ने विवेचना कर दबिश देकर आरोपी उदयराज सिंह पिता भूखल सिंह उम्र 40 वर्ष ग्राम नावापाराकला को पकड़ा गया। आरोपी ने पूछताछ पर पत्नी की हत्या करना स्वीकार किया जिसके निशानदेही पर घटना में प्रयुक्त रॉड जप्त कर आरोपी को गिरफ्तार किया गया। कार्यवाही अतिरिक्त पुलिस अधीक्षक संतोष महतो व एसडीओपी प्रेमनगर नरेन्द्र सिंह पुजारी के मार्गदर्शन में थाना प्रभारी प्रेमनगर नीलिमा तिर्की, एसआई मनोज सिंह, महिला प्रधान आरक्षक फुलमति राजवाड़े, आरक्षक बेचूराम सोलंकी, खेलन सिंह, संतोष ठाकुर, बाबुनाथ पोर्ते, हरिशचंद्र दास व बृजेश कासी सक्रिय रहे।

# जिला प्रशासन ताबड़ तोड़ अवैध धान बिक्री एवं संग्रहण के खिलाफ कर रही है कार्रवाई

**सूरजपुर ब्यूरो( दैनिक विश्व परिवार )**-विगत दिवस कलैक्टर एस जयवर्धन के निर्देश पर राजस्व, खाद्य विभाग की टीम ने जिले के विभिन्न स्थानों पर अवैध धान को लेकर कार्यवाही कर हुए धान जब्त की गई साथ ही अवैध धान मामले पर एक राइस मिल को रीसाइक्लिंग की आशंका पर सील किया गया। गौरतलब है कि जिले में किसानों से धान खरीदी का कार्य किया जा रहा है। ऐसे में अवैध धान को लेकर भी जिला प्रशासन लगातार कार्यवाही कर रहा है ताकि किसी भी प्रकार से अवैध धान की बिक्री धान खरीदी केंद्रों में ना की जा सके। इसी क्रम में राजस्व एवं खाद्य विभाग की टीम ने टुकुड़ांड समिति से 97 बोरी पुराना धान ले जाने की कोशिश पर धान ज़ब्त करने की कार्यवाही करते हुए प्रबंधक के सपुर्द किया गया । साथ धान किसान के पास नहीं होने की सहमति देने के बाद किसान से रकबा समर्पण भी कराया गया। इसके अलावा एक अन्य मामले में बर्बरीक एग्रो प्रतापपुर के द्वारा 240 क्विंटल धान दो गाड़ी में संदेहास्पद स्थिति में पकड़ा गया है। जिले के ग्राम केशवपुर तहसील रामानुजनगर में ट्रक में अवैध धान का परिवहन करते पाए जाने पर 300 बोरी लगभग 120 क्विंटल धान जब्त कर थाना रामानुजनगर को सुपुर्द किया गया। इसके अलावा अवैध परिवहन होते पाए जाने पर रीसाइक्लिंग की आशंका पर जिले के मनोकामना राइस मिल सील किया गया तथा वाहन को धान सहित ज़ब्त दिया गया है।

दैनिक
# विश्व परिवार

विचार-पक्ष

रायपुर शनिवार 28 दिसंबर 2024

www.dainikvishwapariwar.com
vishwapariwarraipur@gmail.com



## संपादकीय

# भागवत को क्यों दी जा रही है धर्म गुरु नहीं बनने की नसीहत

संजय सक्सेना

अपना देश एक रंग बिरंगे गुलदस्ते की तरह है। अनेकता में एकता जिसकी शक्ति है। यहां विभिन्न धर्म और उनकी अलग-अलग पूजा पद्धति देखने को मिलती है तो देश का सामाजिक और जातीय ताना बाना भी काफी बंटा हुआ हुआ है। ऐसे में किसी भी मुद्दे पर किसी तरह की प्रतिक्रिया देने से पूर्व सौ बार उसके बारे में सोचना पड़ता है। वर्ना देश का माहौल खराब होने या जनता की भावनाएं भड़कने में देरी नहीं लगती है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रमुख मोहन भागवत का एक बयान इसका सबसे ताजा उदाहरण है। वैसे यह भी सच्चाई है कि भागवत के बयान पर पहली बार हो-हल्ला नहीं मच रहा है। इससे पूर्व भी भागवत के आरक्षण, ब्राह्मणों, डीएनए से जुड़े बयानों पर हंगामा खड़ा हो चुका है। अब संघ प्रमुख मोहन भागवत के मंदिर-मस्जिद वाले बयान पर साधु-संतों की ओर से आपत्ति सामने आई है। देश में हिंदू संतों की प्रमुख संस्था अखिल भारतीय संत समिति ने आरएसएस प्रमुख मोहन भागवत की हर जगह मंदिर तलाशने और इसके सहारे कुछ लोगों का हिंदुओं का नेता बनने की कोशिश वाली टिप्पणी पर आपत्ति जताई है। समिति ने कहा है कि विभिन्न स्थलों पर मंदिर-मस्जिद विवाद को उठाने वाले नेताओं को अपने दायरे में रहना चाहिए। समिति के महासचिव स्वामी जितेंद्रानंद सरस्वती ने कहा कि मंदिर-मस्जिद का मुद्दा धार्मिक है और इसका फैसला धर्माचार्यों की ओर से किया जाना चाहिए। उन्होंने साफतौर पर कहा कि इस मुद्दे को सांस्कृतिक संगठन आरएसएस के प्रमुख मोहन भागवत को छोड़ देना चाहिए।

स्वामी जितेंद्रानंद सरस्वती ने कहा कि जब धर्म का विषय उठेगा तो उसे धर्माचार्य तय करेंगे। जब यह धर्माचार्य तय करेंगे तो उसे संघ भी स्वीकार करेगा और विश्व हिंदू परिषद भी। स्वामी जितेंद्रानंद ने कहा कि मोहन भागवत की अतीत

में इसी तरह की टिप्पणियों के बावजूद 56 नए स्थानों पर मंदिर पाए गए हैं, जो मंदिर-मस्जिद मुद्दों में रुचि और कार्रवाई का संकेत देते हैं। जितेंद्रानंद महाराज ने जोर देकर कहा कि धार्मिक संगठन जनता की भावनाओं के अनुसार कार्य करते हैं। इन समूहों के कार्य उन लोगों की मान्यताओं और भावनाओं से आकार लेते हैं जिनका वे प्रतिनिधित्व करते हैं, न कि केवल राजनीतिक प्रेरणाओं से। स्वामी जितेंद्रानंद सरस्वती की यह टिप्पणी जगद्गुरु रामभद्राचार्य की ओर से मोहन भागवत से असहमति व्यक्त करने के एक दिन बाद आई है। बता दें जगद्गुरु रामभद्राचार्य ने अपने बयान में कहा था कि मैं यह स्पष्ट कर दूं कि मोहन भागवत हमारे अनुशासनकर्ता नहीं हैं, बल्कि हम हैं। साधू संत तो भागवत के बयान से नाराज हैं हीं इसके साथ-साथ यह भी पहली बार देखने को मिल रहा है कि आरएसएस प्रमुख को 'परिवार' के भीतर भी विरोध का सामना करना पड़ रहा है। इससे पहले द्वारका में द्वारका शारदा पीठम और बद्रीनाथ में ज्योतिर्मठ के शंकराचार्य स्वामी स्वरूपानंद सरस्वती संघ परिवार के खिलाफरुख अपनाते थे, लेकिन उन्हें कांग्रेस की विचारधारा से प्रभावित बता कर उनके बयानों को खारिज कर दिया जाता था। बहरहाल, जगद्गुरु रामभद्राचार्य के साथ-साथ अन्य हिंदू धार्मिक गुरु आरएसएस के सुर में सुर मिलाने को तैयार नहीं हैं। उनका मानना है कि संघ को आस्था के मामलों में धार्मिक हस्तियों के नेतृत्व का सम्मान करना चाहिए। उधर, राजनीति के जानकारों का कहना है कि यह स्थिति धार्मिक मामलों में आरएसएस की भूमिका और प्रभाव को लेकर हिंदू धार्मिक समुदाय के भीतर संभावित झगड़े को भी दर्शाती है। रामभद्राचार्य ने कहा कि संभल में जो कुछ भी हो रहा था वह वास्तव में बुरा था। उन्होंने कहा कि इस मामले में सकारात्मक पक्ष यह है कि चीजें हिंदुओं के पक्ष में सामने आ रही हैं। हम इसे अदालतों, मतपत्रों और जनता के समर्थन से सुरक्षित करेंगे। उन्होंने बांग्लादेश में हिंदुओं के खिलाफ किए गए अत्याचारों पर भी चिंता व्यक्त की।

बता दें हाल ही में आरएसएस प्रमुख मोहन भागवत ने मंदिर-मस्जिद विवादों के फिर से उभरने पर चिंता व्यक्त की थी। उन्होंने लोगों को ऐसे मुद्दों को न उठाने की सलाह दी। मोहन भागवत ने कहा कि मंदिर-मस्जिद विवादों को उछाल कर और सांप्रदायिक विभाजन फैलाकर कोई भी हिंदुओं का नेता नहीं बन सकता। उनका यह बयान हिंदू दक्षिणपंथी समूहों की ओर से देश भर में विभिन्न अदालतों में दशकों पुरानी मस्जिदों पर दावे जैसी मांग के बाद आया है। इस पर हिंदूवादी संगठनों का दावा है कि ये पुरानी मस्जिदें, मंदिर स्थलों पर बनाई गई थीं। इन मस्जिदों में जौनपुर की अटाला और संभल की शाही जामा मस्जिद भी शामिल है, जिस मामले में हाल ही में हिंसा हुई थी। 24 नवंबर को भड़की हिंसा में पांच लोग मारे गए थे।

उधर, आरएसएस प्रमुख मोहन भागवत के बयान पर राजनीति भी थमने का नाम नहीं ले रही है। कांग्रेस ने आरोप लगाया कि आरएसएस प्रमुख मोहन भागवत का मंदिर-मस्जिद विवाद न उठाने का बयान लोगों को गुमराह करने के उद्देश्य से था। यह आरएसएस की खतरनाक कार्यप्रणाली को दर्शाता है, क्योंकि इसके नेता जो कहते हैं उसके ठीक विपरीत करते हैं। वे ऐसे मुद्दे उठाने वालों का समर्थन करते हैं। वहीं कांग्रेस नेता जयराम रमेश ने सोशल मीडिया पोस्ट के जरिए आरएसएस प्रमुख को घेरा। उन्होंने कहा कि अगर आरएसएस प्रमुख ईमानदार हैं तो उन्हें सार्वजनिक रूप से घोषणा करनी चाहिए कि भविष्य में संघ ऐसे नेताओं का समर्थन कभी नहीं करेगा जो सामाजिक सद्भाव को खतरे में डालते हैं। जयराम ने कहा कि आरएसएस प्रमुख ऐसा नहीं कहेंगे, क्योंकि मंदिर-मस्जिद का मुद्दा आरएसएस के इशारे पर हो रहा है। कई मामलों में, जो लोग ऐसे विभाजनकारी मुद्दों को भड़काते हैं और दंगे करवाते हैं, उनके आरएसएस से संबंध होते हैं।

## संसदीय बहस मिथकों में ही उलझी रही.....

लोकसभा में हुई चर्चा पर सियासी तू तू-मैं मैं ही हावी रही। संविधान की तारीफ, अनेक संदर्भों में इसके अयथार्थ महिमामंडन की आम होड़ और उन कसौटियों पर दूसरे पक्ष को कमतर दिखाने की प्रवृत्ति से संसदीय बहस उबर नहीं पाई। संविधान की 75वीं सालगिरह पर संसद में विशेष चर्चा का आयोजन तय हुआ, तो सामान्य स्थितियों में यही अपेक्षा होती कि इस संविधान के तहत 75 साल के अनुभवों पर सदस्य गंभीरता से मंथन करेंगे। इस दौरान वर्तमान संवैधानिक व्यवस्था की उपलब्धियों और नाकामियों का ठोस आकलन किया जाएगा, ताकि भविष्य को बेहतर बनाने पर विचार-विमर्श हो सके। लेकिन ये सामान्य दिन नहीं हैं। इसमें संविधान भी सियासी मुद्दा है। पक्ष और विपक्ष में होड़ यह बताने की है कि किसने संविधान की भावना का ज्यादा उल्लंघन किया है। लोकसभा में हुई चर्चा पर यह सियासी होड़ ही हावी रही। संविधान की तारीफ, अनेक संदर्भों में इसके अयथार्थ महिमामंडन की आम होड़ और उन कसौटियों पर दूसरे पक्ष को कमतर दिखाने की प्रवृत्ति से संसदीय बहस उबर नहीं पाई। चर्चा की शुरुआत करते हुए रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह ने ही दिशा तय कर दी, जब उन्होंने इमरजेंसी का विस्तार से उल्लेख किया और कांग्रेस पर इल्जाम लगाया कि उसने हमेशा संविधान के ऊपर सत्ता को तरजीह दी है। इसके बाद प्रधानमंत्री के भाषण तक सारी चर्चा जवाब, आरोप और प्रत्यारोपों में उलझी रही। राहुल गांधी सहित तमाम विपक्षी नेताओं भाजपा पर तीरे दागे और अपने-अपने अंदाज में उसे कठघरे में खड़ा किया। अब जो दिशा लोकसभा में तय हुई है, राज्यसभा की बहस उससे अलग मोड़ लेगी, इसकी आशा कम ही है। साफ है, संविधान पर किसी सार्थक चर्चा की उम्मीद संसद से जोडऩे का कोई फिलहाल आधार नजर नहीं आता। अगर सचमुच भारतीय संविधान के अनुभवों और आज उसके सामने उपस्थित हुई चुनौतियों पर सार्थक बात करनी है, तो यह दायित्व शायद बुद्धिजीवियों और सिविल सोसायटी को ही उठाना होगा। संविधान कोई धर्म ग्रंथ नहीं होता, जिसकी आलोचनात्मक समीक्षा ना की जाए। वह आस्था का दस्तावेज नहीं है। वह वक्त के तकाजों के अनुरूप बना रहे, इसलिए आवश्यक है कि उसके हर पहलू पर हमेशा सारगर्भित चर्चा करते हुए अधिकतम आम सहमति हासिल की जाए। मगर आज ऐसी चर्चाएं सिविल सोसायटी में भी गायब हैं। नतीजतन संविधान को लेकर मिथकों की भरमार हो गई है।

## आलेख

## मोदी-शाह राज में सब मुमकिन

हरिशंकर व्यास

इस सप्ताह नीतीश कुमार को भारत रत्न देने का कयास सुना तो वही उद्धव ठाकरे ने सावरकर को भारत रत्न देने की मांग की। जबकि सरकार ने सर्वत्र अंबेडकर, अंबेडकर, अंबेडकर का कीर्तन बनाया हुआ है। तो क्यों नहीं मोदी सरकार अपने दिल में बसे डॉ. भीमराव अंबेडकर को दिखाने के लिए इस जनवरी उनके पोते प्रकाश अंबेडकर को भारत रत्न से नवाज देती है? हालांकि कांशीराम, मायावती भी दलितों के आईकॉन हैं! हां, मोदी-शाह राज में सब मुमकिन है। आखिर यथा राजा तथा प्रजा के सत्य में टके सेर भाजी टके सेर खाजा भी तो हम हिंदुओं का इतिहासजन्य अनुभव है। कुछ भी संभव है! बस, राजा के कान में हेडलाइन' का मंत्र फूंक जाए। सोचें, अंबेडकर शब्द के मंत्र पर! भाजपा जन्म से आज तक कभी भी अंबेडकर के नाम पर, दलित वोटों से नहीं जीती। हमेशा रामजी, हिंदू वोट, हिंदू राजनीति से जीती। नरेंद्र मोदी और अमित शाह को न गुजरात में, न बनारस में कभी थोक दलित वोट मिले और न हाल में महाराष्ट्र, झारखंड के चुनावों में मिले। यह भी सत्य है कि संविधान पर हुई बहस में अमित शाह के कहे में कुछ भी गलत नहीं था। अमित शाह का कहना था- हमारे संविधान को कभी भी अपरिवर्तनशील नहीं माना गया। समय के साथ साथ देश भी बदलना चाहिए। समय के साथ कानून भी बदलने चाहिए और समय के साथ साथ समाज भी बदलना चाहिए।ज्अब ये एक फैशन हो गया है। आंबेडकर, आंबेडकर, आंबेडकर, आंबेडकरज् इतना नाम अगर भगवान का लेते तो सात जन्मों तक स्वर्ग मिल जाता। भाषण का यह अंश संसद कार्यवाही का हिस्सा है। तब नरेंद्र मोदी और अमित शाह के कान में किसने यह मंत्र फूंका कि राहुल गांधी के इस ट्विट (मनुस्मृति मानने वालों को अंबेडकर जी से तकलीफ़ बेशक होगी ही) से दलित भड़केंगे? और भविष्य में प्रधानमंत्री बनने का आपका सपना बिखर जाएगा इसलिए जरूरी है कि कांग्रेस को अंबेडकर विरोधी करार देने के लिए भाजपा पिल पड़े! तभी संसद परिसर मानों आर-पार की लडाई का पानीपत हुआ। सोचें, बैठक खाने में सावरकर, चाणक्य की तस्वीर लगाए अमित शाह की अंबेडकर पर पहले स्पष्टवादिता, फिर रक्षात्मक, आक्रामक होने की इस राजनीति पर। भला राहुल गांधी, खडगे़ के मनुस्मृति के जुमले से भाजपा का क्या कोई वोट खराब होता है? अंबेडकर का पोता प्रकाश अंबेडकर दशकों की दलित राजनीति के बावजूद आज भी जीरो है। मायावती जब तक तिलक, तराजू और तलवार इनको मारो जूते चार का नारा लगाती थी तब तक सड़क पर रही और मनुस्मृति के वंशज ब्राह्मणों को हाथी नहीं गणेश का नारा लगा पटाया तो सत्ता में आईं! ऐसे ही आरएसएस के लाठीधारियों के लिए हमेशा पूजनीय यदि सावरकर, हेडगेवार और गोलवलकर थे और उन्हीं की बदौलत अंतत: हिंदू राजनीति को केंद्र का शासन मिला तो मोदी-शाह को सावरकर के सत्य पर अटल रहना चाहिए था या कांग्रेस पर यह पलट वार करना था कि हम असली अंबेडकरवादी हैं और कांग्रेस ने उन्हें धोखा किया जबकि हमने अंबेडकर को भारत रत्न दिया! तभी नैरेटिव के अधबीच उद्धव ठाकरे का संघ परिवार को यह थप्पड़ है जो (सावरकर पर राहुल गांधी की टिप्पणी के ताजा संदर्भ में) उन्होंने सावरकर को भारत रत्न देने की मांग की। उन्होंने देश-दुनिया को बताया है कि मोदी राज अंबेडकर, अंबेडकर तो कर रहा है लेकिन जिस हिंदुवाद तथा संघ परिवार की बदौलत मोदी-शाह सत्ता भोग रहे हैं उसके पितामह सावरकर को अभी तक इस मोदी राज ने भारत रत्न क्यों नहीं दिया? अंबेडकर को दिया और उन्हें नहीं दिया तो यह कथित हिंदुत्व, हिंदू राजनीति की अहसानफरामोशी है या नहीं? जब प्रणब मुखर्जी से कर्पूरी ठाकुर तक तमाम लोगों को भारत रत्न बांट दिए तो आरएसएस के हेडगेवार, गोलवलकर को भी बांट देते? ये क्या अंबेडकर, अंबेडकर कर उनसे अपनी वफादारी दिखा रहे हैं? वही यदि अपने सावरकर, हेडगेवार, गोलवलकर का ही नाम ले लिया होता तो कम से कम अपने वंश, अपनी विचारधारा के तो सगे कहलाते!

# बेहद संवेदनशील संदेश देती है गर्ल्स विल बी गर्ल्स

पंकज दुबे

किशोरवय के बच्चों की ज़िंदगी में इंफ़ेच्युएशन' और लव' के बीच के फ़र्क़ को समझने और उसे मैच्युरिटी से संभालने की दिशा में अपने इकोसिस्टम से सीखते समझते किरदारों की कहानी पर आधारित है गर्ल्स विल बी गर्ल्स । यह एक एक बेहद संवेदनशील और प्रभावशाली फ़िल्म है, जो मां-बेटी के जटिल और गहराई से भरे रिश्ते पर आधारित है। हिंदुस्तानी समाज में सेक्स शब्द किसी टैबू से कम नहीं है। इस शब्द के किसी पब्लिक प्लेस या फिर घर की गैदरिंग में भी उच्चारण मात्र से ऐसा लगता है जैसे कोई बम फट जाता हो। ज़्यादातर लोग सेक्स के बारे में दबी ज़ुबान से फुसफुसाते भर हैं, वो भी क्लोज़्ड सर्कल में। ज़ाहिर है सेक्स एजुकेशन को लेकर कोई विचार विमर्श भी ठीक तरह से नहीं हो पाता है क्योंकि उसमें भी सेक्स शब्द विद्यमान है। हमलोग ऐसे समाज में हैं जहां केमिस्ट के पास कंडोम या सैनिटरी पैड्स ख़रीद कर लेने पर उसे पुराने अख़बार या काली पॉलीथिन में छुपा कर, पैक करके देने की संस्कृति है। दिलचस्प है कि एक ही समय काल में, एक ही देश के अलग अलग हिस्सों में, समाज की अलग अलग परतें, वैल्यूज़, सोच, समझ वाले लोग एक साथ भी बसते हैं। बहरहाल, मौजूदा दौर के हिंदुस्तानी टीन एजर्स लड़के-लड़कियों ही नहीं, बल्कि बच्चों से भी उनके पेरेंट्स को सेक्स और सेक्स एजुकेशन को लेकर खुल कर बातचीत और विचार विमर्श की ज़रूरत है। जब तक सेक्स और सेक्स एजुकेशन को एक गुप्त मुद्दा मानने की बजाय उसे जीवन शैली का हिस्सा बना कर उसका सामान्यीकरण नहीं होगा तब तक बच्चे और किशोर अपनी जिज्ञासाएं पूरी करने के लिए, मन में उठते अपने सवालों के जवाब के लिए इंटरनेट का सहारा लेंगे। हमें अच्छी तरह मालूम है कि इंटरनेट पर सूचनाओं की प्रामाणिकता कितनी संदिग्ध है। इंटरनेट से बच्चों को अधकचरा ज्ञान ही मिलता रहेगा और सूचना का ऑनलाइन समुद्र उनके मन का अंधेरा मिटाने की बजाए और घना करता जाएगा। किशोरवय के बच्चों की ज़िंदगी में इंफ़ेच्युएशन' और लव' के बीच के फ़र्क़ को समझने और उसे मैच्युरिटी से संभालने की दिशा में अपने इकोसिस्टम से सीखते समझते किरदारों की कहानी पर आधारित है गर्ल्स विल बी गर्ल्स । यह एक एक बेहद संवेदनशील और प्रभावशाली फ़िल्म है, जो मां-बेटी के जटिल और गहराई से भरे रिश्ते पर आधारित है। गर्ल्स विल बी गर्ल्स' शुचि तलाटी के निर्देशन में बनी है, जो उनके करियर की पहली फीचर फिल्म है। इंडो-फ्रेंच प्रोडक्शन के तहत सार्थक कलाकार रिचा चड्ढा और अली फज़ल अब निर्माता के रूप में भी दस्तक दे चुके हैं। यह फ़िल्म उनके प्रोडक्शन हाउस पुश बटन स्टूडियोज़ की तरफ़ से पहली प्रस्तुति है, जो इस बात का संकेत देती है कि एक्टर्स-प्रोड्यूसर्स और अब लाइफ पार्टनर्स की ये रचनात्मक जोड़ी साहसी और अर्थपूर्ण कहानियों में जान फूंक कर उन्हें रुपहले पर्दे पर ला सकने के सफ़र में अपना प्रोफ़ेशनल योगदान देने के लिए तैयार है। गर्ल्स विल बी गर्ल्स' का वर्ल्ड प्रीमियर इसी वर्ष सनडांस में हुआ था। उसके बाद इस फ़िल्म को कई अन्य अंतरराष्ट्रीय सम्मान मिले। इस फ़िल्म ने बतौर निर्माता इन दोनों के लिए कामयाबी का देसी झंडा भी तब गाड़ दिया जब इसे मुंबई के मामी फ़िल्म फेस्टिवल में चार अवॉर्ड मिल गए।

फ़िल्म की कहानी 1990 के दशक के भारत में सेट की गई है, जहां एक किशोर लड़की और उसकी मां के बीच के जटिल संबंधों की पड़ताल की गई है। फ़िल्म भारतीय परिवेश के पारंपरिक सामाजिक ढांचे और उसमें मौजूद पितृसत्तात्मक सोच को चुनौती देती है। यह मां और बेटी के व्यक्तिगत और आपसी संघर्षों के माध्यम से सेक्स एजुकेशन, किशोरावस्था की जिज्ञासा, और प्यार और आकर्षण के बीच के अंतर जैसे मुद्दों पर चर्चा करती है। शुचि तलाटी ने बेहद सरल लेकिन प्रभावशाली तरीके से कहानी को बुना है। 90 के दशक के भारतीय जीवन का चित्रण बहुत ही प्रामाणिक और वास्तविक है। संवाद और किरदार बेहद सजीव और पहचानने योग्य लगते हैं। मां-बेटी के बीच के पल कभी आपको हंसाएंगे तो कभी भावुक कर देंगे। फ़िल्म का एक प्रमुख पहलू यह है कि यह किशोरावस्था में सेक्स एजुकेशन के महत्व को उजागर करती है। इसमें दिखाया गया है कि किस तरह एक पीढ़ी की गलतफहमियां और संकोच, अगली पीढ़ी के लिए भ्रम पैदा कर सकती हैं। मां के किरदार में कलाकार (कनी कुशरुति) ने बेहद मजबूत और भावनात्मक परफॉर्मेंस दी है। बेटी की भूमिका में एक उभरते हुए कलाकार, प्रीति पाणिग्रही ने किशोरावस्था की मासूमियत और विद्रोही स्वभाव को बखूबी निभाया है। दोनों के बीच का समीकरण फ़िल्म की आत्मा है। इन दोनों के अलावा केशव बिनॉय खेर ने बॉयफ्रेंड के किरदार में अपनी भूमिका बहुत बेहतर ढंग से निभाई है।

नवोदित लेखक-निर्देशक शुचि तलाटी की स्टोरीटेलिंग में सादगी, सरलता है और इम्पैक्ट सबका बेहद संतुलित पुट है। उन्होंने एक ऐसी कहानी चुनी है, जो जानी-पहचानी तो लगती है लेकिन उसमें ताजग़ी और नई सोच है। उनका लेखन इस बात पर ज़ोर देता है कि हमें अपने समाज में सेक्स एजुकेशन और भावनात्मक जागरूकता को किस तरह और कितना महत्व देना चाहिए। फ़िल्म के सेट और प्रोडक्शन डिज़ाइन में 90 के दशक की झलक साफ़ दिखाई देती है। बैकग्राउंड म्यूज़िक कहानी की नैरेटिव को रोकने की बजाए बेहतर ढंग से उभारता है। सिनेमैटोग्राफी में सादगी है, जो कहानी के गहरे भावनात्मक पहलुओं को उभारने में मदद करती है। कुल मिलाकर इस फ़िल्म में कथ्य और शिल्प दोनों का संतुलित सामंजस्य है । गर्ल्स विल बी गर्ल्स सिर्फ मां-बेटी की कहानी नहीं है, बल्कि यह समाज को आईना दिखाने वाली फ़िल्म है। यह फ़िल्म न केवल एक पीढ़ी की संवेदनाओं और दूसरी पीढ़ी की जिज्ञासाओं के बीच के अंतर को दिखाती है, बल्कि यह भी बताती है कि समझ और संवाद के जरिए इन दूरियों को कैसे मिटाया जा सकता है। भारतीय समाज की तरह ही हिंदी फ़िल्म उद्योग भी सेक्स एजुकेशन से जुड़े विषयों पर सकारात्मक फ़िल्म बनाते रहने से कतराता रहा है, जिसकी एक बड़ी वजह बाज़ार का दबाव माना जा सकता है। बावजूद इसके पिछले साल इस दिशा में एक अहम क़दम उठता तब दिखा जब दर्शकों को ओह माय गॉड-2' देखने को मिली, जिसमें सेक्स एजुकेशन को कहानी का प्रमुख मुद्दा बनाया गया था। इस फ़िल्म के लेखक-निर्देशक अमित राय थे और इसमें अक्षय कुमार और पंकज त्रिपाठी ने अहम भूमिका निभाई थी। इस फ़िल्म ने यह बखूबी साबित किया था गंभीर मुद्दों पर भी मनोरंजक फ़िल्में बनाई जा सकती है, जिसका क़ारोबार भी उत्साहवर्धक हो।

बहरहाल, गर्ल्स विल बी गर्ल्स' बेहद सादगी से दिल को छू लेने वाली कहानी के जरिए बेहद संवेदनशील संदेश देती है। प्राइम वीडियो पर है, देख लीजिएगा।

# अंतर्जातीय विवाह का एकता-अखंडता में महत्त्व

रमेश धवाला

भारत एक विविधतापूर्ण देश है, जहां विभिन्न जातियां, धर्म, संस्कृतियां और भाषाएं प्रचलित हैं। यहां की सामाजिक संरचना में जातिवाद का प्रभाव बहुत गहरा है और कई मामलों में यह सामाजिक असमानता और भेदभाव का कारण बनता है। इन विभिन्न सामाजिक बंधनों को तोडऩे और एकजुटता को बढ़ावा देने का एक प्रभावी तरीका है- अंतर्जातीय विवाह। अंतर्जातीय विवाह न केवल व्यक्तिगत जीवन में बदलाव लाता है, बल्कि यह राष्ट्र की एकता और अखंडता के लिए भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण साबित हो सकता है। भारत में जातिवाद एक पुरानी और जटिल समस्या रही है। जाति के आधार पर समाज में भेदभाव, असमानता और नफ़रत की भावना फैली हुई है। हालांकि, आज के समय में इस सोच को बदलने की आवश्यकता है। अंतर्जातीय विवाह जातिवाद के खिलाफएक मजबूत कदम है। जब लोग अपनी जाति, धर्म या सामाजिक स्थिति की परवाह किए बिना किसी अन्य जाति के व्यक्ति से विवाह करते हैं, तो यह समाज में समानता का संदेश भेजता है। यह हमें यह सिखाता है कि समाज का असली आधार मानवीय संबंधों और प्रेम में होना चाहिए, न कि किसी जाति या धर्म के आधार पर। इस प्रकार, अंतर्जातीय विवाह जातिवाद को समाप्त करने में सहायक हो सकते हैं और समाज में एकता की भावना को बढ़ावा देते हैं। अंतर्जातीय विवाह समाज में समरसता और एकता को बढ़ावा देता है। जब विभिन्न जातियों के लोग आपस में विवाह करते हैं, तो इससे उनके बीच आपसी समझ, विश्वास और सम्मान का वातावरण बनता है। इससे समाज में जातीय भेदभाव और सांप्रदायिक तनाव कम होता है। यह विवाह विभिन्न जातियों के बीच मजबूत सामाजिक संबंध स्थापित करते हैं, जो भारत की एकता और अखंडता के लिए महत्वपूर्ण है। डा. अंबेडकर ने भी अंतर्जातीय विवाह को भारत में जातिवाद खत्म करने में सबसे महत्वपूर्ण माना है। समाज में जातिवाद की जड़ें बहुत गहरी हैं, लेकिन धीरे-धीरे इसके खिलाफसोच बदल रही है। शिक्षा, मीडिया और वैश्विक स्तर पर संपर्क के कारण, आज के युवा अधिक खुले विचारों वाले हैं और वे जाति के बंधनों से परे रिश्ते बनाने की सोच रखते हैं। अंतर्जातीय विवाह इस बदलाव को आकार देने का एक प्रभावी तरीका है, जो समाज में समरसता और सामूहिक शक्ति को बढ़ाता है। अंतर्जातीय विवाह से समाज में शिक्षा और अवसरों का समान वितरण

सुनिश्चित होता है। जब विभिन्न जातियों के लोग एक-दूसरे से विवाह करते हैं, तो वे अपने बच्चों को समान अवसर प्रदान करते हैं। इन विवाहों के माध्यम से बच्चों को यह सीखने को मिलता है कि वे किसी जाति या धर्म के बजाय अपने व्यक्तित्व और क्षमताओं के आधार पर समाज में स्थान बना सकते हैं। इसके अलावा, जब युवा विभिन्न राज्यों और देशों में शिक्षा प्राप्त करने के लिए जाते हैं, तो वे दूसरी जातियों के लोगों से मिलते हैं और विभिन्न संस्कृतियों को समझते हैं। यह अनुभव अंतर्जातीय विवाहों को प्रोत्साहित करता है, क्योंकि इससे समाज में जातीय और सांस्कृतिक विभाजन कम होता है। ऐसे विवाह समाज को समृद्ध और प्रगति की ओर अग्रसर करते हैं। लेकिन बड़े दु:ख की बात है कि हम आज भी खबरों में देखते हैं कि माता-पिता ने अंतर्जातीय विवाह होने पर बेटी या बेटे को घर से निकाला। अंतर्जातीय विवाह के कारण ऑनर किल्लिंग की खबरें भी कई बार पढऩे को मिलती हैं जो कि किसी भी लिहाज से एक सभ्य समाज की पहचान नहीं हो सकती। अंतर्जातीय विवाह केवल सामाजिक सुधार का माध्यम नहीं हैं, बल्कि ये आर्थिक सुधार में भी सहायक होते हैं। जब दो विभिन्न जातियों के परिवार एक-दूसरे से विवाह करते हैं, तो उनके परिवारों की आर्थिक स्थिति में सुधार हो सकता है। ये विवाह आर्थिक दृष्टिकोण से भी महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि वे परिवारों को नई सोच और अवसरों के साथ आर्थिक रूप से मजबूत बना सकते हैं। समाज में जब आर्थिक और सामाजिक सुधार होते हैं, तो इससे जातिवाद की शक्ति कम होती है। विभिन्न जातियों के लोग एक साथ मिलकर काम करते हैं, व्यापार करते हैं और एक-दूसरे से सीखते हैं। इस प्रकार, अंतर्जातीय विवाह समाज में आर्थिक समृद्धि और सामाजिक समानता को बढ़ावा देते हैं। भारत की अखंडता के लिए अंतर्जातीय विवाह अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। जब समाज में जातिवाद और सांप्रदायिकता जैसी समस्याएं खत्म होती हैं, तो देश की एकता मजबूत होती है। अंतर्जातीय विवाह विभिन्न समुदायों के बीच भाईचारे और सहयोग की भावना को बढ़ावा देते हैं, जो भारत की विविधता में एकता का प्रतीक हैं। भारत में धर्म, जाति, भाषा और संस्कृति की विविधता के बावजूद, हमारी एकता और अखंडता को बनाए रखना आवश्यक है। अंतर्जातीय विवाह इस एकता को और भी मजबूत करते हैं क्योंकि वे जातीय और धार्मिक भेदों को मिटाकर एक साझा समाज की ओर बढऩे में मदद करते हैं। अंतर्जातीय विवाह न केवल व्यक्तिगत जीवन में परिवर्तन लाता है, बल्कि यह समाज की सोच को भी बदलता है। यह जातिवाद, भेदभाव और असमानता के खिलाफ एक सशक्त कदम है ।

## संक्षिप्त समाचार

### सागर में जैन समाज का युवक-युवती परिचय सम्मेलन 28 दिसम्बर से

**सागर ( विश्व परिवार )।** अखिल भारतीय जैन युवक युवती परिचय सम्मेलन का 21 वें वर्ष आयोजन संजोग समिति सागर के द्वारा 28 और 29 दिसंबर को आदर्श गार्डन सागर में होने जा रहा है। दो दिवसीय कार्यक्रम में पूरे भारतवर्ष से 1100 से अधिक युवक युवतियों की प्रविष्टि शामिल हुई है। समिति के अध्यक्ष रजनीश डीसेंट और महामंत्री राकेश जैन निश्चय ने बताया कि लगातार 21 वर्षों से यह कार्यक्रम संजोग समिति के द्वारा आयोजित किया जाता है। इस वर्ष भी यह कार्यक्रम बड़े भव्य और आकर्षक तरीके से किया जा रहा है। युवक युवतियों का परिचय बायोडाटा रंगीन पुस्तक में प्रकाशित किया गया है। संजोग समिति के सभी पदाधिकारियों और सदस्यों को अलग-अलग जवाबदारियाँ दी गई थी। समिति के सदस्यों ने अलग-अलग स्थानों पर जाकर प्रविष्टियां एकत्रित की। इस बार उत्तरप्रदेश, राजस्थान, छत्तीसगढ़, गुजरात, महाराष्ट्र, दिल्ली आदि स्थानों से युवक युवतियो के बायोडाटा प्राप्त हुए है। उनका प्रकाशन परिचय पुस्तिका में किया गया है। युवक युवतियों में डाक्टर, इंजीनियर, शासकीय सेवाओं में, विदेश मे कार्यरत, व्यवसायी, उद्योगपति आदि के वायोडाटा प्रकाशित किये गए है। संजोग के स्वागत अध्यक्ष मुकेश जैन ढाना ने बताया कि कार्यक्रम के मुख्य अतिथि विधायक शैलेन्द्र जैन होगे। ध्वजारोहण- सुनील जैन राजेश पटना एडिना, उद्घाटनकर्ता संदीप जैन बबलू सिनेमा देवरी, चित्र अनावरण। अनिल जैन अंशुल जैन केसली मंगलम परिवार सागर, दीप प्रज्वलन। भाजपा नेता श्रीमंत सेठ नेवी जैन सागर द्वारा होगा। सम्मेलन में पांच हजार से अधिक लोगों के भाग लेने की संभावना है।

### देश के महापुरुषों व शहीद की प्रतिमा अंधेरे में, नगर पालिका को सुध नहीं

**नवापारा राजिम ( विश्व परिवार )।** नवापारा नगर में अनेक जगहों विभिन्न चौक चौराहों पर नगर पालिका द्वारा देश के महापुरुषों व शहीद की आदमकद प्रतिमाएं स्थापित की गई हैं। जिसकी देख रेख व रखरखाव की जिम्मेदारी नगर पालिका द्वारा की जाती है। आज ये चौक - चौराहे पूरी तरह से अंधेरे में डूबे हुए हैं। देश के महापुरुष व शहीद अंधेरे में है। गंज रोड में हरिहर स्कूल के पास छत्तीसगढ़ के प्रथम शहीद वीर नारायण सिंह की प्रतिमा लगाई गई है। जिसे देखकर लोग उनके बलिदान को याद कर सके। यहां पर भी घना अंधेरा रहता है। जबकि चंद कदम पर पालिका कार्यालय है। पानी टंकी के सामने सरकारी अस्पताल के पास अमर शहीद हेमू कालाणी की प्रतिमा स्थापित है। यहां की एलईडी लाइट कई महीनो से खराब है जिसे ठीक नहीं किया गया है।रायपुर रोड में गुलाब गार्डन के बाजू देश के तत्कालीन प्रधानमंत्री स्व.राजीव गांधी की प्रतिमा लगी हुई है यह स्थल भी अंधेरे में डूबा हुआ है। स्थानीय बस स्टैंड में लौह महिला पूर्व प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की प्रतिमा लगी हुई है। यहां पर भी यही स्थिति है। यहां से चंद कदमों की दूरी पर आजादी के दीवाने महान क्रांतिकारी नेताजी सुभाष चंद्र बोस की प्रतिमा लगी हुई है।

## व्यक्ति की महानता और उसका पतन उसके आचरण पर निर्भर करता है : मुनि श्री प्रमाणसागर जी

**विदिशा ( विश्व परिवार )।** जन्म से न तो कोई व्यक्ति महान होता है और न ही कोई पतित, किसी महापुरुष के माथे पर तिलक लगा नहीं होता या किसी दुरात्मा के सिर पर सींग नहीं होते, फिर भी इस धरती पर महापुरुष और दुर्जन व्यक्ति दोनों होते है कोई महान बना तो कैसे बना कोई पतित हुआ तो कैसे हुआ? व्यक्ति की महानता और उसका पतन उसके आचरण पर निर्भर करता है, आप सभी छोटे बच्चों में मुझे भारत का भविष्य नजर आ रहा है, जो राष्ट्र का गौरव कहलाऐगा। उपरोक्त उदगार भावनायोग प्रवर्तक मुनि श्री प्रमाणसागर जी महाराज ने सन्मति स्कूल के विद्यार्थियों को सम्बोधित करते हुये व्यक्त किये।

मुनि श्री ने सन्मति स्कूल के बच्चों के माध्यम से संपूर्ण राष्ट्र के बच्चों को मोटिवेशन देते हुये कहा कि आप लोगों का सबसे पहला लक्ष्य पड़ाई की ओर होंना चाहिये जो बच्चेअपने लक्ष्य का ध्यान रखते है वह आगे बड़ जाते है, तथा जो बच्चे पड़ाई के काल में इधर उधर भटक जाते है उनका भविष्य खराब हो जाता है। मुनि श्री ने चार बातों की ओर ध्यान आकृषित करते हुये कहा कि सबसे पहले लक्ष्य बनाओ कि हमें पढ़ना है, तो पढ़ना है इस लक्ष्य से इधर उधर नहीं भटकना है इसके लिये आपको दृण प्रतिज्ञा के साथ संकल्पित होंना होगा, उस लक्ष्य के साथ समर्पित होंना होगा तभी आप लक्ष्य में सफल हो पाओगे मुनि श्री ने कहा कि पड़ाई के दौरान भटकाव से दूर रहना चाहिये। उन्होंने कहा कि कुछ बड़े बच्चे आई आई टी या नीट सी.ऐ क्वालीफाई करने का सोच रहे होंगे अकेले सोचने से कुछ नहीं होता सोच को साकार करने के लिये संकल्पित होंने तथा उसे ठानने से होता है मुनि श्री ने कहा कि अपने संकल्प के साथ समर्पित हो जाओ यदि आप अपने संकल्प के प्रति समर्पित रहोगे तो आपको आगे बड़ने से कोई नहीं रोक सकता।

मुनि श्री ने कहा किआप लोगों में से ही कोई डाक्टर बनेगा कोई इंजीनियर बनेगा तथा कोई वैज्ञानिक होगा या कोई सांसद बनेगा कौन क्या बनेगा अभी किसी को कोई मालुम नहीं आप सभी तो अभी मिट्टी के लोंधे हो इससे मंगल कलश भी बनाया जा सकता है, और शराब का कुल्हड़ भी तो बताओ बच्चो आप क्या बनना चाहते हो? बच्चों ने जबाब देते हुये कहा कि मंगल कलश तो मुनि श्री ने कहा कि जो जीवन का सही रास्ता अपनाऐगा वह जो चाहेगा वह बन सकता है, आपके विद्यालय के सभी शिक्षक आपके भविष्य को गड़ने का पुरुषार्थ कर रहे है और आपके पेरेंट्स अपनी महनत की मौटी कमाई आप पर खर्च कर रहे है, आपके विद्यालय का नाम भी सन्मति है जो कि भगवान महावीर का एक नाम है इसलिये आप सभी को अपना लक्ष्य ध्यान में रखना है मोवाईल या इधर उधर अपने ध्यान को भटकाव से रोकना है, उन्होंने सभी बच्चों को आशीर्वाद देते हुये कहा कि आप लोग अपने विद्यालय का अपने शिक्षकों का तथा अपने पेरेंट्स का नाम रोशन करें, अपने संस्कारों को सुरक्षित रखें, एवं भटकाव से बचें यही मेरा आशीर्वाद है। उपरोक्त जानकारी देते हुये प्रवक्ता अविनाश जैन ने बताया मुनि श्री का मंगल प्रवास दो दिवस सन्मति जैन स्कूल छावनी में रहा। -**अविनाश जैन**

## संबंध जोड़ो या तोड़ो बस संबंध बिगाड़ना नहीं बिगड़े संबंध बहुत ख़तरनाक होते हैं : मुनिश्री सुधासागरजी महाराज

**अशोक नगर पर मुनि पुंगव श्री सुधासागरजी महाराज की कृपा हमेशा रही है: विजय धुर्रा**

**वर्धमान धर्म शाला का महावीर काम्प्लेक्स के रूप में होगा भव्य निर्माण : राकेश कासंल**

**सागर ( विश्व परिवार )।** संबंध जोड़ो या तोड़ो चलेगा लेकिन संबंध बिगाड़ना नहीं है बिगड़े संबंध बहुत ख़तरनाक होते हैं वे किसी भी सीमा तक चले जाते हैं संबंध बिगाड़ते हैं जो आपका बहुत करीबी होता है उसे आपके जीवन की सब तरह की जानकारी होती है संबंधो में गहराई के बाद संबंध बिगड़ जाते हैं तो बह किसी भी हद तक जा सकते हैं मोटीवेशन ले संबंध टूट जाये चलेगा लेकिन संबंध बिगाड़ना नहीं चाहिए नहीं तो ये व्यक्ति की ज़िंदगी बर्बाद करते हुए भी देखें जाते हैं उक्त आश्य केउद्गार मुनि पुंगव श्रीसुधासागरजी महाराज ने सागरोगद तीर्थ सागर में धर्म सभा को सम्बोधित करते हुए व्यक्त किए।

सागर से लौटकर जैन समाज के मंत्री विजय धुर्रा ने बताया कि जैन समाज अध्यक्ष राकेश कासंल उपाध्यक्ष राजेंद्र अमन महामंत्री राकेश अमरोद कोषाध्यक्ष सुनील अखाई मंत्री शैलेन्द्र श्रागर मंत्री विजय धुर्रा इंजिनियर राजेश कुमार थूवोनजी कमेटी अध्यक्ष अशोक जैन टींगू मिल महामंत्री मनोज भैसरवास पूर्व महामंत्री विपिन सिंघई मंत्री शैलेन्द्र दददा युवा वर्ग अध्यक्ष सुलभ अखाई सचिन एन एस संयोजक मनीष सिंघ ई विनोद मोदी राजीव चन्देरी टिंकल जैन मंटू छाया सहित अन्य प्रमुख जनो ने मुनिश्री के चरणों में श्री फल भेंट कर आशीर्वाद प्राप्त किया वाद में मुनिश्री के समक्ष श्री वर्धमान जैन धर्मशाला के हेतु मुनिश्री को श्री फल भेंट कर आशीर्वाद प्राप्त किया इस दौरान समाज अध्यक्ष राकेश कासंल ने कहा कि शहर के हृदय स्थल पर स्थित श्री वर्धमान धर्मशाला को श्री वर्धमान महावीर काम्प्लेक्स के भव्य रूप में विकसित करने का निर्णय पंचायत कमेटी ने लिया है परम पूज्य गुरुदेव आपका जो भी मार्ग दर्शन निर्देशन होगा उसके अनुसार सभी कार्यो हम सब मिलकर सम्पन्न करेंगे इस दौरान कमेटी के मंत्री विजय धुर्रा ने कहा कि अशोक नगर जैन समाज के सभी प्रमुख कारण आपके आशीर्वाद और मार्ग दर्शन से हमेशा से पूरे होते रहे जव से आपने अशोक नगर में त्रिकाल चौबीस की स्थापना कराकर है आज हमारे नगर को देशभर के भक्त तीर्थ के रुप देखते है।

इस दौरान मुनि पुंगव श्रीसुधासागरजी महाराज ने कहा कि अशोक नगर तो हमेशा से ही अपना था और रहेगा कार्य कोई भी करें सभी अपने ही है उसमें क्या हांडी का एक चावल टटोया जाता है पूरी हांडी की जांच की जरूरत ही नहीं है सब कुछ बहुत अच्छा होगा।

उन्होंने कहा कि जो चीज तुम्हें दोबारा चाहिए है बस उसे पर गर्व करना जो आपके लिए बहूमूल्य है दूर्लभ है जैसे मुझे अपनी जिंदगी पर बहुत गर्व है, मुझे अपने मुनि पद पर बहुत खुश हूँ, मुझे मुनिचर्या पालन करने में कितने ही कष्ट हुए लेकिन अपने से बहुत खुश हूँ, भगवान मेरे से खुश है और मैं भगवान से खुश हूँ। या तो संबंध तोड़ो या संबंध जोड़ो, बस सम्बन्ध बिगाड़ना नही। राग करो या वीतराग बस दोनों को बिगाड़ना नही। जिस चीज में हमारा अहित हो उसे पर बड़ों से परामर्श करो, उनसे पूछो कि मैं गुटखा खा सकता हूँ क्या, गंदी बातें करने का मन हो तो गुरु से, शास्त्र से पूछो। अच्छी बातें न पूछ पाओ गुरु से कभी तो बुरी बातें क्या है ये पूछने का साहस करना। -**विजय धुर्रा**

## राज्यपाल ने पूर्व प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह के निधन पर उन्हें दी भावभीनी श्रद्धांजलि

**रायपुर ( विश्व परिवार )।** राज्यपाल श्री रमेन डेका ने पूर्व प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह के निधन पर उन्हें भावभीनी श्रद्धांजलि दी। राजभवन में आयोजित शोक सभा में श्री डेका ने डॉ. सिंह के चित्र पर पुष्पांजलि अर्पित की। अपनी संवेदना व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा कि डॉ. मनमोहन सिंह का जाना केवल उनके परिवार और मित्रों के लिए, बल्कि पूरे देश के लिए एक अपूरणीय क्षति है।

राज्यपाल श्री डेका ने डॉ. मनमोहन सिंह के कार्यों का स्मरण करते हुए कहा कि उन्होंने भारतीय राजनीति और अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। वे 2004 से 2014 तक भारत के प्रधानमंत्री रहे और उनके कार्यकाल में देश ने कई आर्थिक सुधार देखे। उन्होंने वित्त मंत्री के रूप में भी कार्य किया, जहाँ उन्होंने आर्थिक उदारीकरण की दिशा में कई महत्वपूर्ण कदम उठाए। उनकी नीतियों ने भारत को वैश्विक मंच पर एक नई पहचान दिलाई। श्री डेका ने कहा कि डॉ. सिंह की सादगी और विनम्रता ने उन्हें एक अद्वितीय नेता बनाया। उन्होंने हमेशा अपने कार्यों से यह सिद्ध किया कि नेतृत्व केवल शक्ति का प्रदर्शन नहीं, बल्कि लोगों की भलाई के लिए समर्पण है। उनकी बुद्धिमत्ता और दृष्टिकोण ने न केवल राजनीतिक क्षेत्र में बल्कि समाज के हर वर्ग में प्रेरणा दी। डॉ. मनमोहन सिंह का जीवन हमें यह सिखाता है कि सच्चा नेतृत्व कैसे किया जाता है। उन्होंने इस दुखद अवसर पर डॉ. मनमोहन सिंह के परिवार के प्रति अपनी गहरी संवेदनाएँ व्यक्त की।

## मुख्यमंत्री देवेंद्र फडणवीस को नांदणी पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं महामस्तकाभिषेक महोत्सव के लिए निमंत्रण : सागर संभूशेटे

**नांदणी ( विश्व परिवार )।** नांदणी में दिनांक 1 जनवरी से 9 जनवरी 2025 इस कालावधी में होनेवाले पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं महामस्तकाभिषेक महोत्सवास के लिए विधायक डॉ. राहुल प्रकाश आवाडे साहब जी ने मुंबई के सागर निवासस्थान में महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री मा. देवेंद्रजी फडणवीस साहेब जी से मिलकर उन्हें महामहोत्सव में पधारणे हेतु आमंत्रित किया।

डॉ. राहुल आवाडे साहेब जी ने इस महोत्सव का धार्मिक, सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक महत्त्व मुख्यमंत्री जी को बताकर उन्हें उपस्थित रहने के लिए निमंत्रण दिया। इस महामहोत्सव से नांदणी परिसर में सांस्कृतिक परंपरा को नयी उंचाई प्राप्त होगी। साथ ही जैन धर्म के पवित्र परंपरा का दर्शन भाविकों को होगा।

नांदणी पंचकल्याणक महोत्सव कमिटी की ओर से मा. देवेंद्र फडणवीस साहेब को मुख्यमंत्री पद पर नियुक्ती होनेपर सन्मान करके उन्हें शुभेच्छा दिया गया।

मुख्यमंत्री देवेंद्र जी फडणवीस साहब जी ने निमंत्रण स्विकारा और कार्यक्रम को पधारेंगे ऐसा सभी को बताया।

इस समय पंचकल्याणक महोत्सव कमिटी के कार्याध्यक्ष श्री सागर संभूशेटे जी, श्री राजकुमार सावत्रे, श्री स्वप्निल देसाई, श्री दर्शन टारे आदि मान्यवर उपस्थित थे। पंचकल्याणक महोत्सव को यशस्वी बनाने के लिये विविध योजनाए और तैयारी के बारे में सकारात्मक चर्चा संपन्न हुई।

प. पू स्वस्तिश्री जिनसेन भट्टारक पट्टाचार्य महास्वामीजी, नांदणी जी के मंगल अधिनेतृत्व में होनेवाले नांदणी में ऐतिहासिक भव्य पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महामाहोत्सव और मस्तकाभिषेक के लिए इस नांदणी नगर में आचार्य भगवन विशुद्धसागर महाराज जी सहित 29 संतों का आगमन हुआ है।

नमोस्तु शासन जयवंत हो। -अभिषेक अशोक पाटील

## बीईओ एम.आर. यादव ने प्राचार्यों एवं संकुल समन्वयकों की बैठक लेकर दिए आवश्यक दिशा-निर्देश

**विद्यालय में साफ-सफाई, तम्बाकू निषेध बोर्ड लगवाने के साथ न्योता भोजन भी है जरूरी**

**जशपुर/बगीचा ( विश्व परिवार )।** सचिव स्कूल शिक्षा विभाग द्वारा 26 दिसंबर को विडियो कान्फ्रेस में दिये गये निर्देश के परिपालन में विकास खण्ड शिक्षा अधिकारी बगीचा एम.आर. यादव के द्वारा आज सभी शासकीय / अशासकीय हॉयर सेकेण्डरी एवं हाईस्कुल के प्राचार्य एवं सभी संकुल शैक्षिक समन्वयकों की बैठक बगीचा में ली गई। बैठक में निम्नानुसार एजेण्डे पर चर्चा किया गया एवं एजेण्डावार कार्य में प्रगति लाने हेतू निर्देशित किया है। सभी शासकीय/अशासकीय संस्थाओं के कक्षा 06 वीं से 12 वीं तक अध्ययनरत सभी छात्र/छात्राओं का ऑनलाईन पंजीयन दिनांक 29 दिसंबर तक कराये जाने का निर्देश दिया गया। शिक्षकों तथा पालकों का भी पंजीयन अधिकतम कराये जाने का निर्देश दिया गया।स्वच्छ विद्यालय एवं स्वच्छ कार्यालय पर

चर्चा करते हुए विकास खण्ड स्तर के सभी कार्यालयों एवं सभी विद्यालय को साफ-सफाई एवं रंगाई- पोताई एवं परिसर को साफ-सफाई कराने का निर्देश दिया गया। शौचालय की साफ-सफाई पर विशेष ध्यान देने का निर्देश दिया गया। दिनांक 31 दिसंबर तक स्वच्छता कार्य पूर्ण कर प्रमाण पत्र विकास खण्ड शिक्षा कार्यालय बगीचा में प्रस्तुत करने का निर्देशित दिया गया। तम्बाकू निषेध पर चर्चा करते हुए संस्था परिसर से 100 गज की दूरी पर स्थित दुकानों में तम्बाकू विक्रय शक्ति से प्रतिबंधित करने का निर्देश दिया गया। उक्त संबंध का सूचना पटल सभी विद्यालयों में तम्बाकू निषेध का बोर्ड लगवा लिया गया है तथा पीली पट्टी भी बनावा लिया गया है। छात्रवृत्ति पोर्टल में तम्बाकू निषेध का प्रमाण पत्र अपलोड करने का निर्देश दिया गया।

न्योता भोजन पर विकासखंड शिक्षा अधिकारी ने कहा कि प्रत्येक माह में सभी प्राथमिक एवं माध्यमिक शालाओं में कम से कम एक बार न्योता भोज कराये। इस बैठक में सहायक विकास खण्ड शिक्षा अधिकारी दिलीप कुमार टोप्पो, विकास खण्ड स्त्रोत समन्वयक कृष्ण कुमार राठौर तथा सभी शासकीय/अशासकीय हाईस्कूल एवं हॉयर सेकेण्डरी के प्राचार्य एवं संकुल शैक्षिक समन्वयक उपस्थित थे।

## कल्याण आश्रम के 72वें स्थापना दिवस धूमधाम से मनाया गया

**बालासाहब देशपांडे एवं जगदेव राम की जीवन प्रेरणादायक, राजा विजय भूषण सिंह जूदेव ने कल्याण आश्रम के लिए किया जमीन दान**

**जशपुर नगर ( विश्व परिवार )।** अखिल भारतीय वनवासी कल्याण आश्रम के संस्थापक बालासाहब देशपांडे एवं जगदेव जनजाति समाज के सबसे बड़े शुभचिंतक थे। उन्होंने अपना पुरा जीवन समाज सेवा के लिए समर्पित कर दिया। उनकी जीवन गाथा समाज के प्रेरणादायक है। गुरुवार को 72 वां स्थापना दिवस अखिल भारतीय वनवासी कल्याण आश्रम एवं लोक कला संगम जशपुर के द्वारा जिला मुख्यालय के कल्याण आश्रम परिसर में धूमधाम से मनाया गया। इस अवसर पर जिले समेत अन्य प्रदेश से भी अतिथि शामिल हुए।

कार्यक्रम का प्रारम्भ भारत माता एवं स्व. बाला साहब देशपांडे, जगदेव राम के छाया चित्र पर माल्यार्पण के साथ दीप प्रज्वलित कर नमन किया गया। कल्याण आश्रम के स्थापना दिवस पर संस्थापक बालासाहब देशपांडे एवं पूर्व अध्यक्ष जगदेव राम के योगदान को याद किया गया। इस अवसर पर बालासाहब देशपांडे स्मृति भवन में विभिन्न कार्यक्रम आयोजित हुए। राष्ट्रीय अध्यक्ष सत्येंद्र सिंह ने अपने उद्बोधन में स्व बालासाहब देशपांडे एवं पूर्व अध्यक्ष जगदेव राम के जीवनी और कल्याण आश्रम के कार्यो को अवगत कराया।

महामंत्री योगेश बापट ने बताया जशपुर राजा विजय भूषण सिंह जूदेव ने कल्याण आश्रम के लिए जमींन दान किया था। उनके सहयोग से 26 दिसंबर 1952 को जशपुर नगर में बाला साहब देशपांडे द्वारा कल्याण आश्रम की स्थापना की गई। आज कल्याण आश्रम का कार्य संपूर्ण देशभर में फैला हुआ है।

कल्याण आश्रम के पहले राष्ट्रीय अध्यक्ष जगदेव राम थे। स्व. बालासाहब देशपांडे कल्याण आश्रम के संस्थापक थे। उनके अथक प्रयास और राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सहयोग से कल्याण आश्रम का विस्तार हुआ। उस दौरान स्व. बाला देशपांडे ने कोमड़ों निवासी जगदेव राम के सादगी और ईमानदारी को पहचानकर अखिल भारतीय वनवासी कल्याण आश्रम का राष्ट्रीय अध्यक्ष की जिम्मेदारी दिया। वह बालासाहब देशपांडे से प्रभावित होकर उनके मार्गदर्शन पर चलते हुए अपना पुरा जीवन कल्याण आश्रम के लिए समर्पित कर दिया। बालासाहब देशपांडे ने जनजाति समेत अन्य समाज के हित एवं उत्थान के लिए कल्याण आश्रम विद्यालय खोले। डॉ. मृगेन्द्र सिंह ने बताया उस समय चिकित्सालय और विद्यालय की बहुत आवश्यकता थीं। कल्याण आश्रम अस्पताल के साथ चल चिकित्सा प्रारम्भ कर दिया। जिससे लोगों को गांव- गांव स्वास्थ्य लाभ मिल रहा है।

गुरुवार को स्थापना दिवस पर सुबह 10 बजे से कार्यक्रम शुरु हो गया था। इस मौके पर जशपुर क्षेत्र की 167 नृत्य मंडलिया ने हिस्सा लिया। इस दौरान मांदर की थाप व झंकारो की धुन में लोक गीतों पर शानदार नृत्य प्रस्तुति किया। जिसे देखकर दर्शक मंत्रमुग्ध हो गए। इस अवसर पर राष्ट्रीय अध्यक्ष की सत्येंद्र सिंह, महामंत्री योगेश बापट, जशपुर के राजा रणविजय सिंह जूदेव, पुलिस अधीक्षक शशि मोहन सिंह नई दिल्ली से आए उद्योगपति नरेंद्र जिंदल, विनोद जैन आदि उपस्थित रहें।

## मेरठ के जगदीश मंडपम में आयोजित महामंडल विधान में आचार्य श्री ज्ञेयसागर जी मुनिराज ने दिया दिल्ली से गिरनार तक 101 दिवसीय धर्म पदयात्रा के लिए आशीर्वाद : विश्व जैन संगठन

**रायपुर ( विश्व परिवार )।** विश्व जैन संगठन के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री संजय जैन और पदाधिकारियों ने 27 दिसंबर 2025 को मेरठ के जगदीश मंडपम में आयोजित श्री समवशरण महामंडल विधान में ससंघ विराजमान पूज्य आचार्य श्री 108 ज्ञेयसागर जी मुनिराज से अगामी 23 मार्च 2025 को दिल्ली से आरंभ होकर 22वें जैन तीर्थंकर नेमिनाथ भगवान मोक्षस्थल गिरनार जी पर 2 जुलाई 2025 को निर्वाण दिवस पर पहुंचने वाली श्री नेमि गिरनार धर्म पदयात्रा के लिए मंगल आशीर्वाद लिया।

संगठन के अध्यक्ष श्री संजय जैन ने जगदीश मंडपम में धर्म सभा को संबोधित करते हुए साधु सेवा समिति द्वारा विधान के सफल आयोजन के लिए साधुवाद देते हुए सभी को दिल्ली से लगभग 1500 किमी लंबी दिल्ली से गिरनार जी की धर्म पदयात्रा के माध्यम से विभिन्न राज्यों के जैन समाज को जोड़ने और नेमिनाथ भगवान की मोक्ष स्थली के दर्शन करने के साथ अहिंसा, भाईचारे का संदेश देने के उद्देश्य की जानकारी देते हुए सभी को परिवार और मित्रों सहित पद यात्रा में सम्मिलित होकर तीर्थ वंदना के पुण्यार्जन करने का आह्वाहन किया।

संजय जैन ने शिखर जी की स्वतंत्र पहचान और पवित्रता किए संगठन द्वारा किए गए आंदोलन में मेरठ जैन समाज और विशेष रूप से श्री ऋषुराज जी और समस्त संस्थाओं का आभार प्रकट किया। संगठन की महिला प्रकोष्ठ संयोजिका रुचि जैन ने विधान में उपस्थित महिलाओं को परिवार सहित धर्म पद यात्रा में सहभागिता करने और 2 जुलाई को नेमिनाथ भगवान के मोक्षकल्याणक के अवसर पर उनकी मोक्षस्थली गिरनार जी की वंदना करने के लिए प्रेरित किया।

संगठन के राष्ट्रीय उपाध्यक्ष और शिखर जी आंदोलन के संयोजक श्री यश जैन, युवा प्रकोष्ठ के महामंत्री सागर जैन ने बताया कि पूज्य आचार्य श्री ने पद यात्रा के निर्विघ्न पूरा होने के आशीर्वाद के साथ मेरठ सहित समस्त जैन समाज को भगवान नेमिनाथ मोक्षकल्याणक के पावन दिवस 2 जुलाई 2025 को मोक्षस्थल गिरनार जी की यात्रा, दर्शन और निर्वाण लाडू समर्पण के लिए अधिक से अधिक संख्या में तीर्थ वंदना करने और उनके क्षेत्र से होकर जाने वाली धर्म पद यात्रा में शामिल होकर पुण्यार्जन का आशीर्वाद दिया। विधान में नवागढ़ से आए सम्माननीय ब्रह्मचारी निशांत भैया जी ने सभी को यात्रा में सहभागिता करने और गिरनार यात्रा के लिए अनुमोदना करते हुए संगठन के कार्यों की प्रशंसा की।

सरधना से संगठन के युवा प्रकोष्ठ से संयम जैन, अरिहंत जैन, निमित जैन और संगठन के अन्य सदस्यो ने सहभागिता की।

-**आकाश जैन**

www.dainikvishwapariwar.com
vishwapariwarraipur@gmail.com

दैनिक
# विश्व परिवार

बस्तर संभाग

रायपुर शनिवार 28 दिसंबर 2024



## संक्षिप्त समाचार

### कलेक्टर ने ऋण प्रकरणों के निराकरण में धीमी प्रगति पर जताई गहरी नाराज़गी

**बिलासपुर(विश्व परिवार)।** कलेक्टर अवनीश शरण ने आज जिला कार्यालय के मंथन सभाकक्ष में जिला स्तरीय परामर्शदात्री सामिति (डीएलसीसी) की बैठक ली। उन्होंने ऋण प्रकरणों के निराकरण में धीमी प्रगति पर गहरी नाराज़गी जताई। कलेक्टर ने प्रधानमंत्री स्वनिधि योजना में अधिक से अधिक ऋण प्रदान कर लोगों को रोजगार उपलब्ध कराने के निर्देश दिए। बैंको को कहा की समयावधि में ऋण प्रदान करें, वित्तीय वर्ष समाप्ति का इंतजार ना करें। बैठक में कलेक्टर ने कहा कि जिले में महिला स्वसहायता समूह की महिलाएं मजबूती से काम कर रही हैं, और आर्थिक स्वावलंबन के अद्भुत परिणाम मिल रहे हैं। महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण के लिए इस दिशा में कार्य करते हुए अधिक से अधिक ऋण प्रदान करें। उन्होंने मुद्रा लोन योजना के तहत अधिक से अधिक लोन कवर करने के निर्देश दिए। कुछ बैंको की अनुपस्थिति पर भी नाराजगी जताई। बैठक में बताया गया कि एनआरएलएम में मात्र 50 प्रतिशत प्रकरणों में ऋण स्वीकृत किए गए हैं। कलेक्टर ने शेष प्रकरणों पर भी जल्द ऋण स्वीकृत करने कहा। बैठक में जिले में कार्यरत बैंको के व्यवसाय की समीक्षा की गई। इसके अलावा साख जमा अनुपात, प्रधामंत्री मुद्रा योजना, एनआरएलएम, एनयूएलएम, प्रधानमंत्री स्वनिधी योजना, किसान क्रेडिटकार्ड, अन्त्यावसायी, नाबार्ड, आरसेटी सहित अन्य बिन्दुओं पर विस्तार से चर्चा कर निर्देश दिए। बैठक में सीईओ जिला पंचायत संदीप अग्रवाल, लीड बैंक मैंनेजर सहित अन्य जिला स्तरीय अधिकारी एवं बैंकर्स उपस्थित रहें।

### शातिर मोबाइल चोरी चढ़ा पुलिस के हत्थे

**बिलासपुर(विश्व परिवार)।** प्रार्थी अजय कुमार पटेल पिता नरहरि प्रसाद पटेल उम्र 42 वर्ष निवासी गीतांजली सिटी फेस 1, थाना सरकण्डा, जिला बिलासपुर का दिनांक 24.12.2024 को रिपोर्ट दर्ज कराया कि वह रात्रि करीब 08.00 बजे अशोक नगर स्थित लालू बिरयानी सेंटर में खाना खाने गया था, खाना खाते समय अपने मोबाईल मोटोरोला कंपनी का मॉडल जी-45, 5जी किमती 12000रू. को जेब से निकालकर पास के कुर्सी में रखा था, खाना खाने के बाद वह अपने मोबाईल को देखा तो कुर्सी पर नही था, कोई अज्ञात चोर चोरी कर ले गया है, प्रार्थी के उक्त रिपोर्ट पर अपराध सदर कायम कर विवेचना में लिया गया, प्रकरण की विवेचना दौरान मुखबीर से सूचना मिला कि खमतराई में एक व्यक्ति मोबाईल बिक्री करने के लिए ग्राहक की तलाश करते घूम रहा है, उक्त सूचना से पुलिस अधीक्षक महोदय बिलासपुर श्री रजनेश सिंह (भा.पु.से) को अवगत कराया गया जिनके द्वारा तत्काल तस्दीक कर वैधानिक कार्यवाही करने निर्देशित किये। जिसके परिपालन में अति0 पुलिस अधीक्षक बिलासपुर श्री उदयन बेहार एवं नगर पुलिस अधीक्षक सरकंडा श्री सिद्धार्थ बघेल के मार्गदर्शन में थाना प्रभारी निरी. निलेश पाण्डेय के नेतृत्व में तत्काल टीम तैयार कर मुखबीर के बताये हुलिये के व्यक्ति को पकड़कर पूछताछ करने पर अपना नाम गोविंद दास मानिकपुरी निवासी खमतराई का बताया जिसकी तलाशी पर मोटोरोला कंपनी का मोबाईल बरामद हुआ, मोबाईल के संबंध में पूछताछ करने पर लालू बिरयानी सेंटर से चोरी करना बताया, जो उक्त अपराध की मशरूका होने से मोटोरोला मोबाईल किमती 12000रू. को जप्त कर आरोपी के विरूद्ध वैधानिक कार्यवाही किया गया है।

### न्यू ईयर के पहले होटल और कैफे संचालकों की पुलिस ने ली बैठक

**बिलासपुर(विश्व परिवार)।** पुलिस लाइन स्थित बिलासागुडी में शहर के सभी होटल,रेस्टोरेंट,मैरिज पैलेस एवं आगामी नए साल पर कार्यक्रम आयोजित करने वाली सभी संस्थाओं की मीटिंग पुलिस अधीक्षक रजनेश सिंह के निर्देश मे अतिरिक्त पुलिस अधीक्षक (शहर) राजेंद्र जायसवाल,अतिरिक्त पुलिस अधीक्षक, उदयन बेहार,नगर पुलिस अधीक्षक (कोतवाली) अक्षय साबद्रा,प्रशिक्षु (आईपीएस) सुमित कुमार, एसडीम बिलासपुर पियुश तिवारी, तहसीलदार बिलासपुर के द्वारा ली गई मीटिंग में आगामी नव वर्ष के दौरान 31 दिसंबर को होने वाले कार्यक्रमों के संबंध में आवश्यक दिशा निर्देश दिए गये किसी सेलिब्रिटी को यदि बुलाया गया है तो इसकी जानकारी और अनुमति लेना अनिवार्य ,होटल प्रबंधन द्वारा कार्यक्रमों की अनुमति, प्रवेश के लिये कूपन प्रणाली,नए साल के कार्यक्रमों के दौरान लाइसेंस अनिवार्य है (स्नरू लाइसेंस की अनुमति यदि नही है तो आबकारी अधिकारी को लाइसेंस के लिए आवेदन करें सभी बार रात 12 बजे बंद हो जाएंगे,रात 10 बजे के बाद छतों या होटलों में डीजे का उपयोग करते समय डेसिबल नियंत्रित होना चाहिए; लाइव म्यूजिक सिस्टम में हल्का संगीत होना चाहिए होटल मे सुरक्षा व्यवस्था हेतु बाउंसरों की ड्यूटी ,सभी होटल 12.00 बजे बंद हो जाएं।,

# महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण की दिशा में महतारी वंदन एक महत्वपूर्ण कदम : विधायक लता उसेण्डी

## महतारी वंदन योजना के लाभार्थियों को किया गया सम्मानित

**कोंडागांव(विश्व परिवार)।** राज्य सरकार के एक वर्ष पूर्ण होने के अवसर पर सुशासन का एक साल - छत्तीसगढ़ हुआ खुशहाल अंतर्गत महिला एवं बालविकास विभाग के द्वारा विधानसभा स्तरीय महतारी वंदन महिला सम्मान समारोह का आयोजन किया गया, जिसमें मुख्य अतिथि के रूप में बस्तर विकास प्राधिकरण की उपाध्यक्ष एवं कोण्डागांव विधायक लता उसेण्डी सम्मिलित हुई। कार्यक्रम में मुख्यमंत्री विष्णुदेव साय की छत्तीसगढ़ के जनमन के लिए प्रेषित की गई 'विष्णु की पाती का वितरण किया गया। साथ ही बाल विवाह के रोकथाम के लिए सभी को शपथ भी दिलाई गई। विधायक लता उसेंडी ने कार्यक्रम में उपस्थित महिला शक्ति को नमन करते हुए कहा कि सरकार की योजना हर व्यक्ति तक पहुंचे इसके लिए आप सभी की भूमिका महत्वपूर्ण हैं। आप सभी अपने आसपास के लोगों को भी योजनाओं की जानकारी दें और उन्हें लाभ उठाने प्रेरित करें। उन्होंने कहा कि जिले के महिला हितग्राहियों के खाते में हर महीने 17 करोड़ का लेन देन हो रहा है और जिससे आर्थिक विकास भी हो रहा है। विधायक उसेंडी ने कहा कि विभिन्न योजनाओं के तहत महिलाओं को मिलने वाली सहायता की जानकारी दी और कहा कि इन योजनाओं का लाभ उठाकर जिले की महिलाएं अपने जीवन को बेहतर बना सकती हैं। उसेंडी ने बताया कि महतारी वंदन योजना के तहत महिलाओं को हर माह एक हजार रुपये की सहायता राशि दी जा रही है, जिससे महिलाएं आत्मनिर्भर हो रही हैं और उनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति मजबूत हो रही है। यह राशि भले ही छोटी हो, लेकिन इस राशि ने महिलाओं का आत्मविश्वास बढ़ाया है और आर्थिक रूप से बहुत राहत मिल रही है। विधायक उसेण्डी ने इस अवसर पर महिलाओं को ग्रामीण बैंक से मिलने वाली 25 हजार रुपये तक की ऋण सुविधा के बारे में भी बताया और कहा कि इस ऋण के माध्यम से महिलाएं स्वयं सहायता समूहों के सदस्यों के साथ मिलकर छोटी-बड़ी व्यावसायिक गतिविधियां शुरू कर सकती हैं, जिससे उनका आर्थिक विकास संभव हो सके।

## जन सहभागिता से किया गया कार्य सबके हितों के लिए होता है - सांसद रुप कुमारी चौधरी

### वरिष्ठजनों का सम्मान हमारी सनातन संस्कृति की पहचान है : रंजना साहू

**धमतरी(विश्व परिवार)।** ग्राम पोटियाडीह में वरिष्ठ नागरिकों का सम्मान समारोह, सांसद निधि से निर्मित साहू समाज भवन का लोकार्पण एवं धीवर समाज भवन का लोकार्पण कार्यक्रम आयोजित किया गया, कार्यक्रम के मुख्य अतिथि महासमुंद सांसद श्रीमती रूप कुमारी चौधरी, अध्यक्षता भाजपा प्रदेश प्रवक्ता एवं पूर्व विधायक धमतरी श्रीमती रंजना साहू, विशिष्ट अतिथि पिछड़ा वर्ग आयोग अध्यक्ष नेहरू निषाद, जनपद सदस्य अनिल तिवारी, झुग्गी झोपड़ी प्रकोष्ठ प्रदेश संयोजक महेंद्र पंडित की गरिमामय उपस्थिति में सम्पन्न हुआ। अतिथियों द्वारा धार्मिक, राजनीतिक, व्यवसायिक, शिक्षा क्षेत्र के मेधावी छात्र-छात्राओं, विभिन्न क्षेत्रों के प्रमुख व्यक्तियों का सम्मान, मितानिन, स्वच्छता दूत, आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं का सम्मान प्रतीक चिन्ह देकर किया गया। साथ ही गांव के वरिष्ठ नागरिकों का सम्मान किया गया। सभी निर्माण कार्यों को समाज व ग्रामीणों को समर्पित करते हुए महासमुंद सांसद रुपकुमारी चौधरी ने कहा कि जन सहभागिता से किया गया कार्य सबके हितों के लिए होता है, गांव के विकास में जनप्रतिनिधि के सहयोग के साथ साथ क्षेत्र के स्थानीय जनप्रतिनिधि व ग्रामीणों का सहयोग होना आवश्यक है, तभी विकास की सार्थकता सिद्ध होती है। रंजना साहू ने बताया कि वरिष्ठजनों का सम्मान हमारी सनातन संस्कृति की पहचान है, भारतीय जनता पार्टी सदैव वरिष्ठजनों का सम्मान करते आई है, सबका साथ सबका विकास सबका विश्वास यही विचारधारा आगे बढ़ रही है। कार्यक्रम को पिछड़ा वर्ग आयोग अध्यक्ष नेहरू निषाद एवं महेंद्र पंडित ने सम्बोधित करते हुए सभी ग्रामीणों को बधाई दिए। कार्यक्रम में आए सभी अतिथियों व ग्रामीणों का आभार व्यक्त जनपद सदस्य अनिल तिवारी ने किया। कार्यक्रम में मुख्य रूप से आमदी मण्डल अध्यक्ष अमन राव, पूर्व मण्डल अध्यक्ष मुरारी यदू, जगत यादव, राधेश्याम देवांगन, मोतीलाल हिरवानी, विजय देवांगन, बसंत साहू,, सीताराम ध्रुव सरपंच, हिरालाल देवांगन, नरेंद्र हिरवानी, खोरबाहरा ध्रुव, कार्तिक हिरवानी, रंगलाल धीवर, द्वारका प्रसाद साहू, गणेश साहू समस्त पंच एवं गांव के वरिष्ठ नागरिक माता बहन उपस्थिति रहें।

## सुशासन दिवस: मुख्यमंत्री के संदेश 'विष्णु की पाती' का किया गया वितरण

### मुख्यमंत्री का संदेश पाकर महिलाएं हुई उत्साहित

**सुकमा(विश्व परिवार)।** छत्तीसगढ़ सरकार के एक वर्ष पूर्ण होने के उपलक्ष्य में धान खरीदी योजना, प्रधानमंत्री आवास योजना, तेंदूपत्ता संग्रहण योजना और महतारी वंदन योजना के हितग्राहियों को मुख्यमंत्री विष्णु देव साय के संदेश विष्णु की पाती का वितरण किया जा रहा है। कलेक्टर देवेश कुमार ध्रुव के निर्देशन तथा जिला सीईओ नम्रता जैन के मार्गदर्शन में सुकमा जिले में भी मुख्यमंत्री के संदेश 'विष्णु की पाती' हितग्राहीमूलक योजनाओं से लाभान्वित ग्रामीणों और महिलाओं को लगातार वितरित किया जा रहा है। सुशासन दिवस के अवसर पर बुधवार को जिले पंचायतों में स्थित अटल चौक में कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। कार्यक्रम में पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी बाजपेयी के फोटो में माल्यार्पण कर उनके द्वारा किए गए देशहित के कार्यों को याद किया गया। कार्यक्रम में उपस्थित ग्रामीणों को मुख्यमंत्री के संदेश का वितरण भी किया गया। संदेश के वितरण की इस कड़ी में कोंटा विकासखंड के ग्राम धोंदरा, इंजेराम, एर्राबोर, दरभागुड़ा तथा अन्य पंचायतों में घर घर जाकर मुख्यमंत्री के संदेश विष्णु की पाती का वितरण किया गया। इसके साथ ही ग्रामीणों को राज्य सरकार के द्वारा चलाए जा रहे जनकल्याणकारी योजनाओं के बारे में विस्तृत जानकारी प्रदान की गई। उन्हें शासन की विभिन्न हितग्राहीमूलक योजनाओं का लाभ लेने के लिए प्रोत्साहित किया गया। महिलाओं ने विष्णु की पाती पाकर अपनी खुशी जाहिर की। मुख्यमंत्री विष्णुदेव साय द्वारा भेजी गई 'विष्णु की पाती' को पाकर सविता पोयम काफी उत्साहित और खुश नजर आईं। सविता ने कहा कि मुख्यमंत्री द्वारा हमें संदेश भेजना हम सभी महिलाओं के लिए बहुत ही खुशी और गौरव की बात है। हम सभी महिलाएं महतारी वंदन योजना के साथ ही सरकार की अन्य योजनाओं से भी लाभान्वित हो रहे हैं जिससे हमें आत्मनिर्भरता और सम्मान मिल रहा है।

## कलेक्टर ने आयुष्मान आरोग्य मंदिर भाठागांव आर का किया निरीक्षण

**बालोद(विश्व परिवार)।** कलेक्टर श्री इन्द्रजीत सिंह चन्द्रवाल ने आज गुण्डरदेही विकासखण्ड के भाठागांव आर में पहुँचकर आयुष्मान आरोग्य मंदिर का निरीक्षण कर व्यवस्थाओं का जायजा लिया। श्री चन्द्रवाल ने मौके पर उपस्थित सामुदायिक स्वास्थ्य अधिकारी डॉ. गोदावरी तुरतुरिया से अस्पताल की व्यवस्थाओं एवं उपलब्ध संसाधनों के संबंध में जानकारी ली। उन्होंने मौके पर उपस्थित खण्ड चिकित्सा अधिकारी, ब्लॉक कार्यक्रम प्रबंधक एवं अन्य अधिकारियों को आयुष्मान आरोग्य मंदिर के प्रसुति कक्ष में सुरक्षित प्रसव कराने पर्याप्त मात्रा में टेबल एवं अन्य जरूरी व्यवस्थाएं तथा मरीजों के लिए समुचित बेड आदि व्यवस्था सुनिश्चित कराने के निर्देश दिए। इसके अलावा उन्होंने आयुष्मान आरोग्य मंदिर में दवाइयां आदि की समुचित उपलब्धता एवं मरीजों के बेहतर इलाज हेतु जरूरी व्यवस्था सुनिश्चित करने के भी निर्देश दिए। इस दौरान उन्होंने ओपीडी, दवाई वितरण कक्ष, प्रसूति कक्ष आदि का भी निरीक्षण किया। इस मौके पर एसडीएम श्रीमती प्रतिमा ठाकरे झा सहित अन्य अधिकारीगण उपस्थित थे।

## कलेक्टर ने किसानों से उनके खेतों में पहुँचकर की मुलाकात

### मटिया से भेड़िया नवागांव तक किसानों के खेतों में पैदल चलकर रबी फसल का किया मुआयना

**बालोद(विश्व परिवार)।** कलेक्टर श्री चन्द्रवाल जिले में जल के संरक्षण एवं संवर्धन के उपायों के अंतर्गत जिले के किसानों को ग्रीष्मकालीन धान के बदले अन्य फसलों के पैदावार के लिए प्रोत्साहित करने आज किसानों से उनके खेतों में पहुँचकर उनसे मुलाकात की। इसके अंतर्गत श्री चन्द्रवाल आज जिले के बालोद विकासखण्ड के ग्राम मटिया में पहुँचकर किसानों द्वारा अपने खेतों में लगाए गए रबी फसलों का अवलोकन किया। इस दौरान उन्होंने ग्राम मटिया से भेड़िया नवागांव तक किसानों के खेतों में पैदल चलकर रबी फसलों का मुआयना किया। श्री चन्द्रवाल किसानों द्वारा अपने खेतों में लगाए गए ग्रीष्मकालीन धान के बदले चना, गेहूँ, सरसों, लाखड़ी आदि फसल को देखकर बहुत ही प्रसन्नचित हुए। उन्होंने कृषि विभाग के अधिकारियों को ग्राम मटिया एवं आसपास के गांवों में चना एवं गेहूँ आदि फसलों का क्षेत्राच्छादन बढ़ाने के निर्देश भी दिए। इसके अलावा उन्होंने किसानों को इन फसलों का अधिक से अधिक उत्पादन के लिए प्रेरित करने तथा बिक्री आदि की भी समुचित व्यवस्था करने के निर्देश दिए। जिससे किसानों को अपने उत्पाद का वाजिब दाम मिल सके। इस दौरान कृषि विभाग के उप संचालक श्री जीएस धूर्वे, सहायक संचालक श्री एस एन ताम्रकार सहित अन्य अधिकारीगण उपस्थित थे। कलेक्टर श्री चन्द्रवाल ने किसानों को उनके उत्पाद का उचित दाम दिलाने हेतु की जा रही व्यवस्था के अंतर्गत किसान बिचैलियों के माध्यम से अपने उत्पाद की बिक्री न करके कृषक उत्पाद समूह आदि के माध्यम से बिक्री की व्यवस्था के संबंध में विस्तृत चर्चा की। इसके अंतर्गत उन्होंने मौके पर उपस्थित किसानों से चर्चा कर इसके लिए जरूरी आवश्यकताओं के संबंध में भी जानकारी ली। किसानों ने कहा कि इस कार्य के लिए उन्हें सर्वप्रथम फसल पकने के बाद फसलों के उचित रखरखाव की व्यवस्था सुनिश्चित किया जाना अत्यंत आवश्यक है। इसके अंतर्गत फसलों को घुन आदि से बचाने के लिए समुचित मात्रा में दवाइयां आदि की आवश्यकता पड़ेगी। कलेक्टर ने मौके पर उपस्थित कृषि विभाग के अधिकारियों को इसके लिए जरूरी व्यवस्था सुनिश्चित करने के निर्देश दिए। श्री चन्द्रवाल ने कहा कि जिला प्रशासन द्वारा किसानों को उनके उत्पाद का वाजिब दाम दिलाने के लिए बिक्री की उचित व्यवस्था के साथ-साथ उनके फसलों का समुचित रखरखाव हेतु सभी व्यवस्थाएं सुनिश्चित की जाएंगी। श्री चन्द्रवाल ने कृषि विभाग के अधिकारियों को कृषि उत्पादक समूह से चर्चा कर इस संबंध में आवश्यक कार्रवाई करने के निर्देश भी दिए।

## आईआईएम रायपुर ने युवा संगम फेज-5 के तहत असम के छात्रों का स्वागत किया, छत्तीसगढ़ की समृद्ध संस्कृति से कराई परिचय

**रायपुरः** भारतीय प्रबंध संस्थान (भा.प्र.सं.) रायपुर, जो बिल्डिंग बिज़नस ओनर्स के लिए जाना जाता है, ने शिक्षा मंत्रालय की प्रमुख योजना, एक भारत श्रेष्ठ भारत पहल के तहत युवा संगम फेज-5 में हिस्सा लेने आए असम विश्वविद्यालय, सिलचर के 45 छात्रों और 5 समन्वयकों का स्वागत किया। यह सांस्कृतिक आदान-प्रदान कार्यक्रम 26 दिसंबर से 30 दिसंबर 2024 तक चलेगा और इसका उद्देश्य पर्यटन, परंपराओं, विकास और प्रौद्योगिकी में साझा अनुभवों के माध्यम से युवाओं के बीच जुड़ाव को बढ़ावा देना है।

भा.प्र.सं. रायपुर में आयोजित उद्घाटन समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में उत्तर मध्य रेलवे के मंडल रेल प्रबंधक (डीआरएम) श्री संजीव कुमार ने छात्रों को संबोधित किया। उन्होंने छात्रों को भारत की विविध धरोहर और संस्कृति को समझने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने कहा, भारत की ताकत उसकी विविधता में है, और युवा संगम जैसे कार्यक्रम युवा मनों को हमारे देश की समृद्ध विरासत और संस्कृति को समझने और अपनाने का एक अद्भुत मंच प्रदान करते हैं। मैं आप सभी को अधिक से अधिक यात्रा करने के लिए प्रोत्साहित करता हूं, क्योंकि यह न केवल आपके दृष्टिकोण को व्यापक बनाएगा बल्कि हमारे देश की एकता को भी मजबूत करेगा।

भा.प्र.सं. रायपुर के निदेशक प्रो. राम कुमार काकानी ने उत्साहपूर्वक असम के प्रतिनिधिमंडल का स्वागत किया और भारत के युवाओं के बीच समझ और एकता को गहरा करने के महत्व पर जोर दिया। उन्होंने कहा, भा.प्र.सं. रायपुर में असम के उत्साही छात्रों की मेजबानी करना हमारे लिए सौभाग्य की बात है। शिक्षा मंत्रालय द्वारा प्रायोजित यह युवा संगम कार्यक्रम पारस्परिक सीख, सांस्कृतिक आदान-प्रदान और क्षेत्रों के बीच गहरे संबंधों को बढ़ावा देने का एक स्वर्णिम अवसर है। छत्तीसगढ़ की समृद्ध संस्कृति में अनुभव करने के लिए बहुत कुछ है। मैं प्रतिनिधियों से आग्रह करता हूं कि वे इस अनुभव का पूरा लाभ उठाएं और अपने साथ यादगार और जीवनभर के अनुभव लेकर जाएं।

इस कार्यक्रम के हिस्से के रूप में प्रतिनिधियों को किट वितरित की गईं, जिससे इस समृद्ध पांच दिवसीय यात्रा की शुरुआत हुई। यह सांस्कृतिक आदान-प्रदान कार्यक्रम असम और छत्तीसगढ़ के बीच संबंधों को मजबूत करता है, जिसमें आईआईएम रायपुर और असम विश्वविद्यालय, सिलचर, इस पहल को बढ़ावा देने वाले प्रमुख संस्थान हैं।


## कार्यालय, शासकीय नर्सिंग महाविद्यालय रायपुर, (छ.ग.)

क्रमांक 18 नर्सिंग/क्रय / 2024 रायपुर, दिनांक 24/12/2024

### द्वितीय निविदा सूचना
### // कडंम वाहन की नीलामी की सूचना //

शासकीय नर्सिंग महाविद्यालय, रायपुर के कडंम वाहन टाटा सूमो ग्रेड़ी कार को विक्रय छ0ग0 भण्डार-क्रय नियमों के अंतर्गत किया जाना है। जिस हेतु फर्मों से मुहरबंद निविदायें आमंत्रित की जाती है। निविदा हेतु निविदा प्रपत्र शासकीय नर्सिंग महाविद्यालय, रायपुर के कार्यालय से कार्यालयीन दिवस एवं समय में शुल्क रूपये 200.00 (दो सौ रू0 मात्र) नगद जमा कर दिनांक 03.01.2025 तक प्राप्त किया जा सकता है, जो वापसी योग्य नहीं है।

मुहरबंद निविदायें शासकीय नर्सिंग महाविद्यालय, रायपुर के नाम से अंतिम तिथि 06.01.2025 तक दोपहर 11.00 बजे तक स्वंय उपस्थित होकर अथवा पंजीकृत डाक / स्पीड पोस्ट के माध्यम से स्वीकार किया जावेगा।

प्राप्त निविदा दिनांक 06.01.2025 को दोपहर 12.00 बजे क्रय समिति के समक्ष खोली जावेगी, जिसमें निविदा दाता अथवा उनके प्रतिनिधि उपस्थित हो सकते हैं।

निविदा प्रपत्र प्राप्त करने की तिथि निविदा प्रकाशन दिनांक से 03.01.2025 शाम 05.30 बजे तक।

शासकीय नर्सिंग महाविद्यालय
रायपुर, छत्तीसगढ

जी- 242504870/3

# तालाबो के सीमांकन, सभी मद के निर्माण कार्य, आयुष्मान कार्ड, राशन कार्ड और स्वास्थ्य संबंधी विषयों को लेकर आयुक्त ने की समीक्षा

भिलाईनगर ( विश्व परिवार )। नगर पालिक निगम भिलाई के आयुक्त राजीव कुमार पाण्डेय ने पूर्व में दिए गये निर्देशों के कार्यों की प्रगति की समीक्षा बैठक बुलाई, जिससे चल रहे विकास/निर्माण कार्यों में और गति लाया जा सके। वर्ष 2023 से शुरू हुए सभी निर्माण कार्यों की समय अवधि लगभग पूर्ण हो रहा है और जिन कार्यों में विलंब हो रहा है। उसे समय अवधि में पूर्ण करने हेतु आयुक्त ने सभी जोन आयुक्त एवं कार्यपालन अभियंता को निर्देशित किये, कि सभी कार्यों को दिए गये समय पर पूर्ण कराये। नगर निगम भिलाई क्षेत्र में स्थित सभी तालाबो का सीमांकन किया जाए। उसको नगर निगम के राजस्व रिकार्ड में दुरुस्त किया जाए। जिससे कोई भी व्यक्ति तालाब के किनारे अतिक्रमण न कर सके।

आयुक्त पाण्डेय ने यह भी कहा कि आयुष्मान कार्ड सभी वार्डो में बनाये जा रहे है, उसके बनाने की गति को तेज किया जाए, जिससे अधिक से अधिक लोग आयुष्मान कार्ड बनवाकर लाभ ले सकें। साथ ही नवीन राशन कार्ड बहुत से बनकर राशन दुकानो पर रखे है, उसका शिविर प्रत्येक सोमवार को सुबह 11ः00 से 4ः00 तक जोन कार्यालय में लगाये जा रहे है। हितग्राही जोन कार्यालय में, राशन दुकानो में आकर अपना नवीन राशन कार्ड लेकर जा रहे है, किन्तु इस कार्य में और गति लाने की आवश्यकता है, जिससे समय अवधि के अंदर सभी के पास नवनी राशन कार्ड पहुंच जाए। सामुदायिक सुलभ शौचालय के जीर्णोद्वार, निर्माण आदि का कार्य सभी जोन क्षेत्र में चल रहा है उसे गुणवत्तापूर्ण समय अवधि में पूर्ण करने के निर्देश अधिकारियो को दिए है।

इसी प्रकार पेयजल व्यवस्था में सतत निगरानी रखी जाए, जहां कही भी नल की टोटी टूटी मिले या पाईप में लिकेज दिखे उसे शीघ्र संधारण किया जाए। घरों से डोर-टू-डोर कचरा कलेक्शन किया जा रहा है तो नागरिक को समझाइस दी जाए कि अपने घर से निकलने वाले गीला एवं सूखा कचरो को पृथक कर देवें, जिससे गीला एवं सूखा कचरा अलग करने में परेशानी न हो। अगर कोई नहीं मानता है तो उनके ऊपर चालानी कार्रवाई की जाए। उन घरों से कचरा लेना बंद किया जाए जो लोग बार-बार समझाने के बाद भी गीला कचरा सूखा कचरा एक में मिला कर देते हैं। गौरतलब है, कि नगर निगम भिलाई के स्वास्थ्य विभाग के स्वच्छता दीदीयों एवं हमारे जनप्रतिनिधियो द्वारा लगातार समझाइस दी जा रही है कि गीला एवं सूखा कचरा अलग करे। किन्तु आदत से मजबूर लोग एक ही में कचरा मिलाकर दे रहे है। इससे सफाई व्यवस्था में बहुत परेशानी होती है।

बैठक के दौरान मुख्य अभियंता, सभी अधीक्षण अभियंता, जोन आयुक्त, कार्यपालन अभियंता, सहायक अभियंता, राजस्व अधिकारी, उपअभियंता, उद्यान अधिकारी, स्वास्थ्य अधिकारी, जोन स्वास्थ्य अधिकारी सहित अन्य अधिकारी कर्मचारी उपस्थित रहे।

# इधर-उधर कचरा डालने वालों पर रहेगी सीसीटीवी की नजर

दुर्ग ( विश्व परिवार )। दिसंबर नगर पालिक निगम।आयुक्त सुमित अग्रवाल के निर्देश पर वार्डों में लगातार नागरिकों एवं दुकानदारों को कचरा बाहर न फेंकने हेतु समझाइश दी जा रही है इस हेतु विभिन्न वार्डों में लगातार कचरा फैलाने वालों पर अर्थदंड की कार्यवाही भी की जा रही है। साथ ही साथ वार्ड के मुख्य चौक चौराहों पर सीसी टीवी कैमरे भी लगाए जा रहे हैं।

जिससे खुले में कचरा फैलाने वालों पर सतत निगरानी रखी जा सके।डोर-टू-डोर कचरा उठाने के अभियान के बीच शहर की मुख्य सड़कों और चौराहों को कचरे से पाटने वालों की खैर नहीं है। ऐसा करने वालों पर अब तीसरी आंख की नजर रहेगी।सुबह नगर निगम स्वास्थ्य विभाग की टीम के कचरा हटाने के बाद अगर कोई भी कचरा डालता है तो उसे जुर्माना लगाया जा रहा है।डोर-टू-डोर कचरा कलेक्शन होने के बाद व्यवसायिक संस्थानों और गली मोहल्ले के लोग इन प्वाइंट पर कचरा फेंकना शुरू कर देते हैं।नगर निगम शहर के लगभग 60 वार्ड से डोर-टू-डोर कचरा उठाने का निरन्तर अभियान कर चुका है।वार्डो के चौक चैराहो सीसीटीवी कैमरे लगातार नजर रखेंगे। काफी समय से देखा जा रहा था की शहर के दुकान के बाहर सहित सड़को सहित चौक चौराहों पर कचरा फेक देते है। कचरा हटाने के बाद भी दिन भर कचरे का ढेर लगा रहता है। इसे देखते हुए, आयुक्त सुमित अग्रवाल ने निर्देश पर सीसी कैमरे लगाने के निर्देश दिया है। इससे गंदगी करने वालो पर नजर रखी जाएगी।

### कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-7)
मंगलम काम्प्लेक्स अग्रसेन चौक, रायपुर
E-mail ID - rmczone7@gmail.com

पत्र क्र./16890/ न.पा.नि./जोन क्र.-7/2024
रायपुर, दिनांक 27-12-2024

## इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16890**
**वार्ड का नाम-37-तात्यापारा वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 37 स्थित/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR738D00095** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **SHAHADAT HUSAIN** पिता/पति, श्री/श्रीमती .... के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **जामीन अली** पिता/पति, श्री/श्रीमती **मजाहीर हुसैन** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **शपथ पत्र, मृत्यु प्रमाण पत्र**/ वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री श्रीमती प्रीति सिंह**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-7**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

### कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-7)
मंगलम काम्प्लेक्स अग्रसेन चौक, रायपुर
E-mail ID - rmczone7@gmail.com

पत्र क्र./16775/ न.पा.नि./जोन क्र.-7/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

## इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16775**
**वार्ड का नाम-25-संतरामदास वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 25 स्थित/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR818F00839** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **HRIDAY RAM** पिता/पति, श्री/श्रीमती .... के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **उषा साहू पति स्व. हृदय राम साहू, राहूल साहू, खेमलाल साहू** पिता/पति, श्री/श्रीमती **स्व. हृदय राम साहू** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ ... / वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री श्रीमती प्रीति सिंह**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-7**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

### कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-7)
मंगलम काम्प्लेक्स अग्रसेन चौक, रायपुर
E-mail ID - rmczone7@gmail.com

पत्र क्र./16714/ न.पा.नि./जोन क्र.-7/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

## इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16714**
**वार्ड का नाम-23-शहीद मनमोहन सिंह बख्शी वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 23 स्थित/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR812F0359A** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **NANDLAL CHHABADA** पिता/पति, श्री/श्रीमती **LATE CHANDIRAM CHHABADA** के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **अनिल कुमार गोयनका** पिता/पति, श्री/श्रीमती **स्व. प्रेमचंद गोयनका** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **पंजीकृत विक्रय विलेख** / वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री श्रीमती प्रीति सिंह**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-7**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

### कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-7)
मंगलम काम्प्लेक्स अग्रसेन चौक, रायपुर
E-mail ID - rmczone7@gmail.com

पत्र क्र./16838/ न.पा.नि./जोन क्र.-7/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

## इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16838**
**वार्ड का नाम-22-पं. ईश्वरीचरण शुक्ल वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 22 स्थित/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR814F01043** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **SHABINA KHAN** पिता/पति, श्री/श्रीमती **MO. SALIM KHAN** के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **पटेल अफशा तोसिफ** पिता/पति, श्री/श्रीमती **पटेल तोसिफ अहमद** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **पंजीकृत विक्रय विलेख** / वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री श्रीमती प्रीति सिंह**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-7**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

### कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-7)
मंगलम काम्प्लेक्स अग्रसेन चौक, रायपुर
E-mail ID - rmczone7@gmail.com

पत्र क्र./16768/ न.पा.नि./जोन क्र.-7/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

## इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16768**
**वार्ड का नाम-22-पं. ईश्वरीचरण शुक्ल वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 22 स्थित/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR814F00985** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **SHABBIR HUSSAIN ZAFAR** पिता/पति, श्री/श्रीमती **MO.ALI ZAFAR** के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **फतिमा वनक** पिता/पति, श्री/श्रीमती **मंसूर वनक** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **पंजीकृत दानपत्र** / वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री श्रीमती प्रीति सिंह**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-7**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

### कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-7)
मंगलम काम्प्लेक्स अग्रसेन चौक, रायपुर
E-mail ID - rmczone7@gmail.com

पत्र क्र./16715/ न.पा.नि./जोन क्र.-7/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

## इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16715**
**वार्ड का नाम-39-स्वामी आत्मानंद वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 39 स्थित/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR715E00345** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **RAJEEV KULKARNI/ SANJEEV KULKARNI** पिता/पति, श्री/श्रीमती **SHATARAM KULKARNI** के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **सौरभ टिलवानी, सुमीत टिलवानी** पिता/पति, श्री/श्रीमती **सुरेश कुमार टिलवानी** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **पंजीकृत विक्रय विलेख** / वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री श्रीमती प्रीति सिंह**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-7**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

### कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-7)
मंगलम काम्प्लेक्स अग्रसेन चौक, रायपुर
E-mail ID - rmczone7@gmail.com

पत्र क्र./16840/ न.पा.नि./जोन क्र.-7/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

## इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16840**
**वार्ड का नाम-38-शहीद चुड़ामणी नायक वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 38 स्थित/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR516E00584** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **SUDHA UPADHYAY** पिता/पति, श्री/श्रीमती .... के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **तोषपल उपाध्याय** पिता/पति, श्री/श्रीमती **स्व. मणी लाल उपाध्याय** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **अपंजीकृत वसीयतनामा** / वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री श्रीमती प्रीति सिंह**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-7**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

### कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-7)
मंगलम काम्प्लेक्स अग्रसेन चौक, रायपुर
E-mail ID - rmczone7@gmail.com

पत्र क्र./16839/ न.पा.नि./जोन क्र.-7/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

## इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16839**
**वार्ड का नाम-22-पं. ईश्वरीचरण शुक्ल वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 22 स्थित/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR569F00414** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **NISHA VIJAY RAJE W/O VIJAY BHASKAR RAO RAJE** पिता/पति, श्री/श्रीमती **BHASKAR RAO GOPALRAO RAJE** के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **डॉ. राजीव चौधरी** पिता/पति, श्री/श्रीमती **स्व. राम सिंह** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **पंजीकृत विक्रय विलेख** / वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री श्रीमती प्रीति सिंह**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-7**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

### कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-7)
मंगलम काम्प्लेक्स अग्रसेन चौक, रायपुर
E-mail ID - rmczone7@gmail.com

पत्र क्र./16766/ न.पा.नि./जोन क्र.-7/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

## इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16766**
**वार्ड का नाम-23-शहीद मनमोहन सिंह बख्शी वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 23 स्थित/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR812A00336** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **SANDHYA BAJAJ W/O RAJIV BAJAJ S/O DIPAK BAJAJ** पिता/पति, श्री/श्रीमती .... के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **एकता मित्तल** पिता/पति, श्री/श्रीमती **दिनेश मित्तल** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **पंजीकृत विक्रय विलेख** / वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री श्रीमती प्रीति सिंह**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-7**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

### कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-7)
मंगलम काम्प्लेक्स अग्रसेन चौक, रायपुर
E-mail ID - rmczone7@gmail.com

पत्र क्र./16893/ न.पा.नि./जोन क्र.-7/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

## इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16893**
**वार्ड का नाम-39-स्वामी आत्मानंद वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 39 स्थित/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR715D00029** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **RAMJI SHARMA** पिता/पति, श्री/श्रीमती **B P. SHARMA** के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **अशोक अग्रवाल पिता सियसासम अग्रवाल, ऋषि अग्रवाल** पिता/पति, श्री/श्रीमती **राधेश्याम अग्रवाल** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **पंजीकृत विक्रय विलेख** / वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री श्रीमती प्रीति सिंह**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-7**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

### कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-7)
मंगलम काम्प्लेक्स अग्रसेन चौक, रायपुर
E-mail ID - rmczone7@gmail.com

पत्र क्र./16786/ न.पा.नि./जोन क्र.-7/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

## इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16786**
**वार्ड का नाम-25-संतरामदास वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 25 स्थित/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR818F0289A** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **RAM KHILAWAN** पिता/पति, श्री/श्रीमती **RAJWA SAHU** के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **प्रहलाद साहू** पिता/पति, श्री/श्रीमती **रामखिलावन साहू** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **पंजीकृत दानपत्र** / वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री श्रीमती प्रीति सिंह**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-7**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

### कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-7)
मंगलम काम्प्लेक्स अग्रसेन चौक, रायपुर
E-mail ID - rmczone7@gmail.com

पत्र क्र./16836/ न.पा.नि./जोन क्र.-7/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

## इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16836**
**वार्ड का नाम-39-स्वामी आत्मानंद वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 39 स्थित/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR715D00108** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **RIKESH, NIMESH, GAURAV, DIPESH, MANISH** पिता/पति, श्री/श्रीमती **GOVIND PATEL** के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **पूजा शर्मा** पिता/पति, श्री/श्रीमती **रमेश कुमार शर्मा** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **पंजीकृत विक्रय विलेख** / वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री श्रीमती प्रीति सिंह**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-7**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

### कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-7)
मंगलम काम्प्लेक्स अग्रसेन चौक, रायपुर
E-mail ID - rmczone7@gmail.com

पत्र क्र./16837/ न.पा.नि./जोन क्र.-7/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

## इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16837**
**वार्ड का नाम-22-पं. ईश्वरीचरण शुक्ल वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 22 स्थित/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR569F00352** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **RAVIKUMAR KANDE** पिता/पति, श्री/श्रीमती ... के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **मधु कंडे** पिता/पति, श्री/श्रीमती **स्व. रवि कुमार कंडे** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **अपंजीकृत वसीयतनामा** / वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री श्रीमती प्रीति सिंह**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-7**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

### कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-7)
मंगलम काम्प्लेक्स अग्रसेन चौक, रायपुर
E-mail ID - rmczone7@gmail.com

पत्र क्र./16717/ न.पा.नि./जोन क्र.-7/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

## इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16717**
**वार्ड का नाम-24-सरदार वल्लभभाई पटेल वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 24 स्थित/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR818B00069** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **DURGA BAI** पिता/पति, श्री/श्रीमती **PARMANAND TIWARI** के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **ओम प्रकाश तिवारी पिता स्व. परमानंद तिवारी , दामिनी तिवारी** पिता/पति, श्री/श्रीमती **ओम प्रकाश तिवारी** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **पंजीकृत दानपत्र** / वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री श्रीमती प्रीति सिंह**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-7**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

### कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-7)
मंगलम काम्प्लेक्स अग्रसेन चौक, रायपुर
E-mail ID - rmczone7@gmail.com

पत्र क्र./16361/ न.पा.नि./जोन क्र.-7/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

## इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16361**
**वार्ड का नाम-39-स्वामी आत्मानंद वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 39 स्थित/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR717A00355** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **HARINARAYAN AGRAWAL** पिता/पति, श्री/श्रीमती **SATYANARAYAN AGRAWAL** के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **दिनेश कुमार शर्मा (HUF) कर्ता दिनेश कुमार शर्मा** पिता/पति, श्री/श्रीमती **स्व. रामेश्वर प्रसाद शर्मा** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **पंजीकृत विक्रय विलेख**/ वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री श्रीमती प्रीति सिंह**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-7**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

### कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-7)
मंगलम काम्प्लेक्स अग्रसेन चौक, रायपुर
E-mail ID - rmczone7@gmail.com

पत्र क्र./16638/ न.पा.नि./जोन क्र.-7/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

## इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16638**
**वार्ड का नाम-37-तात्यापारा वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 37 स्थित/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR717D00064** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **MANISH KUMAR** पिता/पति, श्री/श्रीमती **PREM CHAND CHABRA** के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **धनुमल कुकरेजा** पिता/पति, श्री/श्रीमती **किशन चंद कुकरेजा** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **पंजीकृत विक्रय विलेख**/ वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री श्रीमती प्रीति सिंह**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-7**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

### कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-7)
मंगलम काम्प्लेक्स अग्रसेन चौक, रायपुर
E-mail ID - rmczone7@gmail.com

पत्र क्र./16520/ न.पा.नि./जोन क्र.-7/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

## इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16520**
**वार्ड का नाम-37-तात्यापारा वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 37 स्थित/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR738F0054A** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **NAJNIN BANO** पिता/पति, श्री/श्रीमती **PREMCHAND** के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **करूणा अग्रवाल पति कमल किशोर अग्रवाल, कमल किशोर अग्रवाल** पिता/पति, श्री/श्रीमती **पूरनमल अग्रवाल** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **पंजीकृत विक्रय विलेख**/ वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री श्रीमती प्रीति सिंह**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-7**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

### कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-7)
मंगलम काम्प्लेक्स अग्रसेन चौक, रायपुर
E-mail ID - rmczone7@gmail.com

पत्र क्र./15863/ न.पा.नि./जोन क्र.-7/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

## इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 15863**
**वार्ड का नाम-22-पं. ईश्वरीचरण शुक्ल वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 22 स्थित/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR569F00056** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **SHASHANK BAJPEYI, SANJEEV BAJPEYI** पिता/पति, श्री/श्रीमती **AVADHESH BAJPEYI** के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **मोनिका पटेल** पिता/पति, श्री/श्रीमती **रामनारायण पटेल** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **पंजीकृत विक्रय विलेख**/ वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री श्रीमती प्रीति सिंह**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-7**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

### कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-7)
मंगलम काम्प्लेक्स अग्रसेन चौक, रायपुर
E-mail ID - rmczone7@gmail.com

पत्र क्र./16716/ न.पा.नि./जोन क्र.-7/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

## इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16716**
**वार्ड का नाम-24-सरदार वल्लभभाई पटेल वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 24 स्थित/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR818B0069A** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **DURGA BAI** पिता/पति, श्री/श्रीमती **PARMANAND TIWARI** के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **गिरजा शंकर तिवारी पिता स्व. परमानंद तिवारी, नेहा तिवारी** पिता/पति, श्री/श्रीमती **गिरजा शंकर तिवारी** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **पंजीकृत दानपत्र**/ वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री श्रीमती प्रीति सिंह**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-7**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

### कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-7)
मंगलम काम्प्लेक्स अग्रसेन चौक, रायपुर
E-mail ID - rmczone7@gmail.com

पत्र क्र./16319/ न.पा.नि./जोन क्र.-7/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

## इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16319**
**वार्ड का नाम-25-संतराम दास वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 25 स्थित/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR819A00217** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **MOHAN LAL SINHA , BHUWAN LAL SINHA , REKHARAM SINHA , SOHANLAL SINHA KUNTI SINHA** पिता/पति, श्री/श्रीमती **LT. FIRTU SINHA** के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **शिवनारायण साहू** पिता/पति, श्री/श्रीमती **दुनाराम साहू** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **पंजीकृत विक्रय विलेख**/ वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री श्रीमती प्रीति सिंह**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-7**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

### कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-7)
मंगलम काम्प्लेक्स अग्रसेन चौक, रायपुर
E-mail ID - rmczone7@gmail.com

पत्र क्र./16640/ न.पा.नि./जोन क्र.-7/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

## इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16640**
**वार्ड का नाम-24-सरदार वल्लभभाई पटेल वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 24 स्थित/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR818C00552** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **SMT. RUKHMANI BAI SAHU** पिता/पति, श्री/श्रीमती **RAMBHAJ SAHU** के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **बिन्दु साहू, यशवंतीन साहू, ममता निषाद** पिता/पति, श्री/श्रीमती **राम भज साहू** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **पंजीकृत दानपत्र**/ वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री श्रीमती प्रीति सिंह**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-7**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

### कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-7)
मंगलम काम्प्लेक्स अग्रसेन चौक, रायपुर
E-mail ID - rmczone7@gmail.com

पत्र क्र./16713/ न.पा.नि./जोन क्र.-7/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

## इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16713**
**वार्ड का नाम-39-स्वामी आत्मानंद वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 39 स्थित/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR715B00327** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **NANDKUMAR AGRAWAL** पिता/पति, श्री/श्रीमती **LATE. BHARAT LAL JI AGRAWAL** के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **संजय अग्रवाल** पिता/पति, श्री/श्रीमती **नंद कुमार अग्रवाल** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **पंजीकृत दानपत्र**/ वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री श्रीमती प्रीति सिंह**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-7**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

### कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-7)
मंगलम काम्प्लेक्स अग्रसेन चौक, रायपुर
E-mail ID - rmczone7@gmail.com

पत्र क्र./16892/ न.पा.नि./जोन क्र.-7/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

## इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16892**
**वार्ड का नाम-39-स्वामी आत्मानंद वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 39 स्थित/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR715E00081** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **DR. TARUVENDRA SHEKHAR DIWEDI** पिता/पति, श्री/श्रीमती **DURGA PRASAD DIWEDI** के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **चंन्द्रादित्य उपाध्याय** पिता/पति, श्री/श्रीमती **चंन्द्र प्रकाश उपाध्याय** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **पंजीकृत विक्रय विलेख**/ वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री श्रीमती प्रीति सिंह**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-7**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

### कार्यालय नगर पालिक निगम, रायपुर (जोन क्र.-7)
मंगलम काम्प्लेक्स अग्रसेन चौक, रायपुर
E-mail ID - rmczone7@gmail.com

पत्र क्र./16360/ न.पा.नि./जोन क्र.-7/2024
रायपुर, दिनांक 26-12-2024

## इश्तिहार

**नामांतरण प्र.क्र. 16360**
**वार्ड का नाम-37-तात्यापारा वार्ड**

एतद् द्वारा सूचित किया जाता है कि वार्ड 37 स्थित/भूमि जिसका प्रॉपर्टी आई.डी. **RPR738E00179** जो की निगम अभिलेख श्री/श्रीमती **SUDHAKAR RAO** पिता/पति, श्री/श्रीमती .... के नाम से दर्ज है, जिसको श्री/श्रीमती **जयंत महावादी, बबन महावादी, शशिकांत महावादी, रजनी आशवाले, अंजना गायकवाड़** पिता/पति, श्री/श्रीमती **स्व. सुधाकर राव महावादी** ने मृत्यु प्रमाण पत्र, सह पत्र, शपथ पत्र, दान पत्र, हिब्बानामा, रजिस्ट्री विलेख के अनुसार/ **शपथ पत्र, मृत्यु प्रमाण पत्र**/ वंशानुक्रम/अन्य अभिलेख द्वारा प्राप्त नगर पालिक निगम अधिनियम 1956 की धारा 167 के तहत द्वारा आवेदन किया है। यदि कोई व्यक्ति/संस्था उपरोक्त स्वामित्व परिवर्तन में हक या दावा रखते हैं, प्रकाशन के 30 दिन के भीतर प्रकरण क्रमांक सहित लिखित में अपना दावा/प्रस्तुत करें। निर्धारित समयावधि पश्चात प्राप्त दावा/आपत्ति पर किसी प्रकार की सुनवाई नहीं की जाएगी। जिसके लिए यह कार्यालय जिम्मेदार नहीं होगा।

-सूचना जारी करें-
**श्री श्रीमती प्रीति सिंह**
**( जोन कमिश्नर )**
**जोन क्रमांक-7**
**नगर पालिक निगम, रायपुर ( छ.ग. )**

दैनिक
# विश्व परिवार
महानगर

www.dainikvishwapariwar.com
vishwapariwarraipur@gmail.com

रायपुर, शनिवार 28 दिसम्बर 2024

## कुशमाहा जलाशय के कार्यों के लिए 1.16 करोड़ रूपए स्वीकृत

**रायपुर (विसं)।** राज्य शासन ने महेन्द्रगढ़-चिरमिरी-भरतपुर जिले के विकासखंड सोनहत अंतर्गत कुशमाहा जलाशय के बांध एवं नहर का जीर्णोद्धार कार्य कराने के लिए एक करोड़ 66 लाख 48 हजार रूपए स्वीकृत किए गए हैं। प्रस्तावित कार्यों के पूर्ण हो जाने पर क्षेत्र में रूपांकित सिंचाई क्षमता 421 हेक्टेयर हो जाएगी। जल संसाधन विभाग मंत्रालय महानदी भवन से सिंचाई योजना के कार्यों को कराने के लिए मुख्य अभियंता हसदेव गंगा कछार जल संसाधन विभाग अम्बिकापुर को प्रशासकीय स्वीकृति जारी की है।



## रायपुर के फाफाडीह निवासी प्रतीक जैन सीए बने

**रायपुर (विश्व परिवार)।** फाफाडीह गली नंबर 4 निवासी कीर्तिशेष श्री निर्मल चंद जी मोदी (कुरा वालो) के पोते एवं श्री प्रदीप जैन-श्रीमती प्रतिभा जैन के सुपुत्र श्री प्रतीक जैन चार्टर्ड अकाउंटेंट बने गए। गत रात गुरुवार को सीए फाइनल के परिणामों की घोषणा हुई जिसकी सूची में प्रतीक ने यह सफलता हासिल की।

प्रतीक ने अपनी सफलता का श्रेय अपने दादा जी, माता-पिता एवं चाचाओं से मिली प्रेरणा तथा सोशल मीडिया से दूरी को दीया। प्रतीक ने बताया कि उन्होंने रिवीजन एवं टेस्ट सीरीज के निरंतर अभ्यास से इस सफलता को हासिल किया। प्रतीक की इस कामयाबी पर परिवारजनों, इष्ट मित्रों एवं समाज के सदस्यों प्रसन्नता व्यक्ति करते हुए उसे हार्दिक बधाइयां प्रेषित की दैनिक विश्व परिवार, प्रतीक के सफल, सुखद एवं यशस्वी जीवन की मंगल कामना करता है।

## आचार संहिता जनवरी के प्रथम सप्ताह में कभी भी : अरुण साव

### निकाय और पंचायत चुनाव बैलेट पेपर के जरिए होगा

**रायपुर (आरएनएस)।** नगरीय निकाय और त्रिस्तरीय पंचायत चुनाव की तैयारियों के बीच नगरीय प्रशासन मंत्री अरुण साव ने बड़ा बयान दिया है. उन्होंने कहा कि नगरीय निकाय और पंचायत का चुनाव बैलेट पेपर के जरिए होगा. 7 जनवरी के बाद कभी भी आचार संहिता लग सकती है.नगरीय प्रशासन मंत्री अरुण साव ने मीडिया से चर्चा में कहा कि ईवीएम मशीन की तैयारी में समय लग रहा था, जिसके मद्देनजर बैलट पेपर से चुनाव का निर्णय किया गया है. चुनाव आयोग तैयारी कर रही है. उन्होंने बताया कि नगरीय निकाय चुनाव पर सरकार तैयारी कर रही है. नियमों में परिवर्तन हुआ है, आरक्षण की प्रक्रिया हो रही है. सरकार जल्द से जल्द चुनाव करने प्रतिबद्ध है. मंत्री अरुण साव ने बताया कि आरक्षण की प्रक्रिया और महापौर के लिए 7 तारीख निर्धारित की है. जैसे ही आरक्षण की प्रक्रिया समाप्त होगी, चुनाव आयोग को उसको सूचना भेजी जाएगी. उन्होंने बताया कि हमने नई व्यवस्था की है, कई नियमों में परिवर्तन किया गया है. कानून में परिवर्तन कर हमने व्यवस्था की है. उन्होंने बताया कि हर तीन महीने में मतदाता सूची बनाने का निर्णय लिया है, जिससे छूटे हुए नाम को जोड़ा जा सके. तेज गति से हम चुनाव की प्रक्रिया में आगे बढ़ रहे हैं. बोर्ड परीक्षा मार्च में शुरू हो रही है. निश्चित रूप से परीक्षाओं से पहले हम चुनाव करा लेंगे, ऐसी हमें पूरी उम्मीद है।

## विचक्षण जैन विद्यापीठ, राजेंद्र नगर के वार्षिक उत्सव 'तारतम्य' में छात्रों की अद्भुत प्रस्तुति

**कुम्हारी (विश्व परिवार)।** कुम्हारी में विचक्षण जैन विद्यापीठ का वार्षिक समारोह तारतम्य बड़े ही धूमधाम से आयोजित किया गया। इस अवसर पर छात्रों ने अपनी प्रतिभा का शानदार प्रदर्शन कर अभिभावकों और अतिथियों को मंत्रमुग्ध कर दिया।

विद्यालय के ट्रस्टी सीए विजय मालू और प्राचार्या श्रीमती नीतू जैन ने बताया कि इस वर्ष के समारोह का विषय तारतम्य था, जो शरीर, मन, और आत्मा के बीच सामंजस्य और संतुलन को दर्शाता है। छात्रों ने इस विषय को अपनी प्रस्तुतियों के माध्यम से प्रभावी ढंग से जीवंत किया, और यह संदेश दिया कि जीवन में सामंजस्य बनाए रखना अत्यंत महत्वपूर्ण है।

कार्यक्रम का शुभारंभ मुख्य अतिथि श्री सौरभ देवेगर (आईआरएस) के स्वागत उद्बोधन से हुआ। उन्होंने छात्रों को प्रेरित करते हुए धर्म और नैतिकता के महत्व पर प्रकाश डाला। विशेष अतिथि श्री संजय गिड़िया, श्री अभिनव सिंग, और श्री गौतम चंद गोलछा ने भी अपनी गरिमामयी उपस्थिति दर्ज की और छात्रों का उत्साह बढ़ाया। विद्यालय के ट्रस्टी श्री सुरेश कांकरिया, श्री वीरेंद्र नाहर, श्री अनिल लोढ़ा, श्री राजेश गिड़िया, श्री सुनील गोलछा, और श्री सौरभ लोढ़ा ने इस आयोजन में भाग लिया। प्राचार्या श्रीमती नीतू जैन ने वार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत करते हुए छात्रों को सामंजस्य और संतुलन के महत्व को समझने और इसे अपने जीवन में आत्मसात करने के लिए प्रेरित किया। कार्यक्रम की प्रस्तुतियों ने विद्यार्थियों की रचनात्मकता और उनकी गहरी समझ को दर्शाया। तारतम्य की अवधारणा को नृत्य, नाटक और संगीत के माध्यम से इस तरह से प्रस्तुत किया गया कि हर कोई मंत्रमुग्ध हो गया।

विद्यालय की ओर से छात्रों की इस अद्भुत प्रस्तुति की सराहना की गई, जो समग्र शिक्षा की प्रतिबद्धता का परिचायक है। यह वार्षिक उत्सव न केवल छात्रों की प्रतिभा को मंच प्रदान करता है, बल्कि उनके भीतर जीवन में संतुलन और सामंजस्य स्थापित करने के संस्कार भी विकसित करता है। हम सभी अभिभावकों के निरंतर समर्थन और विश्वास के लिए हृदय से आभार व्यक्त करते हैं।

## राष्ट्रीय बाल पुरस्कार लेकर लौटी हेमबती का एयरपोर्ट में स्वागत

**रायपुर (विश्व परिवार)।** छत्तीसगढ़ राज्य बाल कल्याण परिषद द्वारा संचालित बालगृह (बालिका) कोंडागांव में निवासरत बालिका जूडो खिलाड़ी कुमारी हेमबती को कल 26 दिसम्बर को राष्ट्रपति द्रोपदी मुर्मू जी ने प्रधानमंत्री राष्ट्रीय बाल पुरस्कार 2024 से सम्मानित किया था। उन्हें मेडल और प्रमाण पत्र प्रदान किया गया और साथ ही पुरस्कार की राशि 1 लाख रुपए देबमती के बैंक एकाउंट में भेजा जाएगा। आज दोपहर बालगृह कोंडागांव की अधीक्षक श्रीमती मणि शर्मा के साथ देबमती पुरस्कार प्राप्त कर रायपुर पहुंची, विमानतल में छत्तीसगढ़ राज्य बाल कल्याण परिषद की उपाध्यक्ष डॉ कमल वर्मा, महासचिव चंद्रेश शाह, संयुक्त सचिव राजेन्द्र कुमार निगम, प्रभा सेंद्रे, श्वेता सिंह, रिंकू, लेखा, इंद्रसेन, ने उन्हें पुष्प गुच्छ, माला और शाल पहना कर स्वागत किया गया। छत्तीसगढ़ राज्य बाल कल्याण परिषद के अध्यक्ष एवं रायपुर के सांसद बृजमोहन अग्रवाल ने भी देबमती को बधाई देते हुए उनके उज्जव भविष्य की कामना किए हैं। विमानतल में महीला एवं बाल विकास विभाग छत्तीसगढ़ सरकार के अधिकारी मिडिया के लोगो ने भी उनसे भेट किए।

## कबीरधाम जिले की 5 सिंचाई परियोजनाओं के भूमि अधिग्रहण के लिए 53.95 करोड़ मंजूर

**रायपुर (विश्व परिवार)।** कबीरधाम जिले में सिंचाई सुविधाओं को विस्तार देने और कृषि उत्पादकता बढ़ाने के उद्देश्य से राज्य शासन ने पांच प्रमुख सिंचाई परियोजनाओं के लिए भूमि अधिग्रहण हेतु 53 करोड़ 95 लाख रुपये की राशि स्वीकृत की है। जल संसाधन विभाग ने ई-कुबेर पोर्टल के माध्यम से 80 प्रतिशत राशि पहले ही जमा कर दी है। इन परियोजनाओं के लिए जिले के 42 गांवों का सर्वेक्षण पूरा हो चुका है, जिसमें 716 किसानों की कुल 149.229 हेक्टेयर भूमि अधिग्रहित की जाएगी। घटोला जलाशय परियोजना में 3 गांवों के 26 किसानों की 8.472 हेक्टेयर भूमि, जगमड़वा जलाशय परियोजना में 15 गांवों के 286 किसानों की 67.79 हेक्टेयर भूमि, बड़ौदा खुर्द जलाशय परियोजना में 13 गांवों के 205 किसानों की 44.260 हेक्टेयर भूमि, रामपुर बरेंडा व्यपवर्तन परियोजना में 2 गांवों के 56 किसानों की 5.786 हेक्टेयर भूमि, हॉप नदी व्यपवर्तन योजना में 9 गांवों के 141 किसानों की 22.920 हेक्टेयर भूमि अधिग्रहित की जाएगी।

## छत्तीसगढ़ स्टेट पॉवर कंपनी में 6 जनवरी को नि:शुल्क दंत और ईएनटी शिविर

**रायपुर (विश्व परिवार)।** छत्तीसगढ़ स्टेट पॉवर कंपनीज के डंगनिया, रायपुर स्थित चिकित्सालय में 6 जनवरी, 2025 को नि:शुल्क दंत (डेंटल) एवं कान, नाक, गला रोग (ईएनटी) शिविर का आयोजन छत्तीसगढ़ स्टेट पॉवर ट्रांसमिशन कंपनी चिकित्सालय के तत्वावधान में किया जा रहा है जिसमें दंत रोग विशेषज्ञ डॉ. अबीर मिश्र, एम.डी.एस.(कंजरवेटिव एंड एंडोडोन्टिक्स) एवं ईएनटी विशेषज्ञ डॉ.सुरभि मिश्रा (एम.एस.ईएनटी) उपस्थित रहेंगे।

पॉवर कंपनी मुख्यालय में कार्यरत उत्पादन, पारेषण तथा वितरण कंपनियों के अधिकारियों, कर्मचारियों तथा उनके परिजनों के लिए पॉवर ट्रांसमिशन कंपनी द्वारा औषधालय का संचालन किया जाता है। इस औषधालय में पॉवर कंपनी द्वारा मल्टीस्पेशलिटी चिकित्सा के लिए सूचीबद्ध रायपुर नेत्र चिकित्सालय के संयुक्त तत्वावधान में यह नि:शुल्क जांच शिविर आयोजित किया जा हैं जिसमें पूर्वान्ह 10 बजे से लेकर अपरान्ह 2 बजे तक मरीजों की नि:शुल्क जांच की जायेगी।

चिकित्सालय प्रबंधन द्वारा पॉवर कंपनी के सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों से अपील की गई है कि अधिक से अधिक संख्या में आकर नि:शुल्क चिकित्सा सुविधा का लाभ उठायें।

## पंजीकृत निर्माण श्रमिकों के नवीनीकरण की अंतिम तिथि 31 तक

**रायपुर (विश्व परिवार)।** छत्तीसगढ़ भवन एवं अन्य निर्माण कर्मकार कल्याण मंडल द्वारा पंजीकृत निर्माण श्रमिकों के लिए महत्वपूर्ण सूचना जारी की गई है। जिन निर्माण श्रमिकों का पंजीकरण एक वर्ष या उससे अधिक समय से समाप्त हो चुका है और जिन्होंने आज तक पंजीकरण नवीनीकरण के लिए आवेदन नहीं किया है, वे अगामी 31 दिसम्बर 2024 तक आवेदन कर सकेंगे। निर्माण श्रमिक अपनी पंजीकरण नवीनीकरण प्रक्रिया श्रमेव जयते मोबाईल ऐप, मुख्यमंत्री श्रम संसाधन केन्द्र की विभागीय वेबसाइट व च्वाइस सेंटर से कर सकेंगे। वहीं 31 दिसम्बर 2024 के बाद जिनका पंजीकरण नवीनीकरण नहीं होगा, उन्हें अपंजीकृत माना जाएगा। अधिक जानकारी के लिए मुख्यमंत्री श्रमिक सहायता केन्द्र के हेल्पलाइन नंबर 0771-3505050 पर संपर्क किया जा सकता है।

## छत्तीसगढ़ सरकार ने कर्मचारियों को दी सौगात

**रायपुर (विश्व परिवार)।** मुख्यमंत्री श्री विष्णु देव साय ने कर्मचारियों के हितों को ध्यान रखते हुए मासिक भत्तों में संशोधन किया गया है। इससे कर्मचारियों का कार्य प्रदर्शन बेहतर हो सकेगा। छत्तीसगढ़ सरकार ने राज्य के विभिन्न सरकारी कर्मचारियों के यात्रा भत्ते की मासिक दरों में संशोधन किया है। इस संबंध में वित्त विभाग द्वारा जारी किया गया है। राज्य सरकार द्वारा संशोधित भत्ते के लिए राजस्व निरीक्षकों, विक्रय अमीन, सहायक ग्रामीण कृषि विस्तार अधिकारी (ग्राम सेवक), सहायक विकास विस्तार अधिकारी, पशु चिकित्सा के क्षेत्र सहायक,लोक स्वास्थ्य यांत्रिकी विभाग के हैंड पंप तकनीशियनों को शामिल किया गया है। उनको वर्तमान दर 350 रुपए प्रति माह को संशोधित कर 1200 रुपए प्रति माह यात्रा भत्ता दिया जाएगा। इसी तरह जिला और तहसील स्तर के राजस्व विभाग के भृत्य एवं जमादार,वन विभाग और राजस्व विभाग के चेन मैन, न्यायिक एवं वाणिज्यक कर विभाग के प्रोसेस सर्वर तथा ग्रामीण क्षेत्र में कार्यरत पटवारियों के वर्तमान दर 300 रुपए प्रति माह में संशोधन कर 1000 रुपए प्रति माह यात्रा भत्ता दिया जाएगा। राज्य सरकार द्वारा यह संशोधन कर्मचारियों के कामकाज को ध्यान में रखते हुए किया गया है।

## छत्तीसगढ़ कलार समाज रायपुर के तत्वाधान में 34वां प्रदेश स्तरीय युवक-युवती परिचय एवं पारिवारिक मिलन समारोह का आयोजन

**रायपुर (विश्व परिवार)।** छत्तीसगढ़ कलार समाज रायपुर द्वारा युवक-युवती परिचय सम्मेलन का आयोजन 25 दिसम्बर 2024 को पंडित दीनदयाल अटूटोरियम साइंस कॉलेज परिसर में किया गया जिसमें 10.00 बजे भगवान विघ्नहर्ता गणेश एवंसहस्त्रबाहु अर्जुन का पूजा आरती कर सम्बंध नामक पत्रिका का विमोचन किया गया। 11 बजे बच्चों का सांस्कृतिक कार्यक्रम की प्रस्तुति किया गया।साथ ही स्नेह भोज 11.30 बजे युवक-युवती परिचय जिला महामंत्री श्री कुँवर विजय सिन्हा जी द्वारा सम्मेलन का कार्यक्रम प्रारंभ करते हुएगया।

कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रूप में छत्तीसगढ़ साशन के वित्त मंत्री, माननीय ओपी चौधरी जी और कलार ज़माज के गौरव छत्तीसगढ़ साशन के स्वाथ्य मंत्री, आदरणीय श्री श्याम बिहारी जायसवाल जी साथ ही विधायक संजारी बालोद श्रीमती संगीता सिन्हा जी एवं महासमुंद विधायक आदरणीय राजू सिन्हा जी ने अपनी गरिमामयी उपस्तिथिति दर्ज कराई।उनके गरिमा में उपस्थित से यह कार्यक्रम और भी सफल और शानदार बन गया।

आदरणीय श्री युवराज सिन्हा कलार समाज प्रांताध्यक्ष अतिथियों का स्वागत किया गया प्रदेश महामंत्री आदरणीय रिखी राम सिन्हा जी, प्रदेश कोषाध्यक्ष आदरणीय श्री डॉ. बिसम्भर सिन्हा, कार्यक्रम के संयोजक श्री भूषण सिन्हा जी, प्रांताध्यक्ष महिला मंच श्रीमती प्रमिला सिन्हा, जिला अध्यक्ष रायपुर श्री राजेन्द्र सिन्हा जी, जिला महामंत्री श्री कुँवर विजय सिन्हा जी, जिला कोषाध्यक्ष श्री खुशवंत सिन्हा जी, जिला उपाध्यक्ष श्री पन्ना लाल सिन्हा जी, जिला संगठन मंत्री श्री मेवा लाल सिन्हा जी, प्रदेश उपाध्यक्ष युवा मंच श्री नन्दू सिन्हा जी, जिला युवा मंच अध्यक्ष श्री सत्येन्द्र सिन्हा जी उपस्थित रहे

कार्यक्रम की अध्यक्षता जिला अध्यक्ष श्री राजेन्द्र कुमार सिन्हा जी एवं मंडलेश्वर गण श्री कृपा राम सिन्हा जी, ओमप्रकाश डड़सेना जी, डॉ.पुरषोत्तम सिन्हा जी, श्री पूना राम सिन्हा जी भी रहे। जिसमें प्रदेश भर के युवक युवती और स्वजातीय बंधुओं लगभग 6000 से 7000 की संख्या में सम्मेलन में पधारे थे प्रदेश के विभिन्न स्थान से आए हुए युवक युवतियों में से लगभग 120 युवक युवतियों ने अपना परिचय मंच में आकार दिया। मुख्य अतिथि के उध्बोधन के बाद समाज के पदाधिकारी गणों ने सम्मेलन को संबोधित किया।प्रदेश अध्यक्ष श्री युवराज सिन्हा जी के द्वारा बोरिया स्थित जमीन जिसमें समाज द्वारा बाउंड्रीवाल किया गया है को समाज के नाम पर पंजीय न करने की मांग रखा गया इसके अतिरिक्त समाज के लिए 50 लाख रुपए आवंटन करने की मांग तथा नया रायपुर में कलार समाज के लिए 5 एकड़ जमीन आरक्षित करने की मांगरखा गया है जिसे माननीय मुख्य अतिथि ओपी चौधरी वित्त मंत्री छत्तीसगढ़ शासन ने समाज को अश्वत किया है कि वे मुख्यमंत्री जी को इस संबंध में वे आग्रहपूर्वक अवगत कराएंगे। माननीय संसाद श्री बृजमोहन अग्रवाल जी अपने व्यस्त कार्यक्रम से समय निकाल कर अपना बहुमूल्य समय समाज को दियाऔर हमारे सम्मेलन में पंहुचे उसने भी रायपुर दक्षिण मंडल ने मांग सौपा है, की समाज की जगह पर ही बड़ा मंच एवं टिन सेड के लिए 2500000 लाख रुपया की मांग दक्षिण मंडल के मंडलेश्वर श्री कृपा राम सिन्हा जी के द्वारा रखा गया उन्होंने भी आश्वस्त किया है समाज को श्री युवरसिन्हा जी, श्री डॉ.बिसम्भर सिन्हा जी, श्रीमती प्रमिला सिन्हा को अवगत कराया गया। इस आरक्षित भूमि पर कार्य अतिशीघ्र करने का निवेदन किया जिसे आये हुए पदाधिकारी नेताओं ने मिला कर कार्य करने का आश्वाशन दिया। अंत मे सभी पदाधिकारियों को समाज का प्रतीक चिन्ह भेंट कर सम्मान किया गया। इस अवसर पर समाज के पदाधिकारी सयोजक श्री भूषण सिन्हा जी, श्री विकाश चन्द्र सिन्हा जी मंडलेश्वर कृपा राम सिन्हा जी सचिव श्री प्रेमप्रकाश गजेन्द्र जी जिला महामंत्री श्री कुँवर विजय सिन्हा जी, शहर सचिव श्री कौशल सिन्हा जी एवं अन्य सामाजिक स्वजतीय उपस्थित रहे।

## छत्तीसगढ़ में फार्मास्यूटिकल एवं मेडिकल डिवाइसेस हब बनने की पूरी संभावना : स्वास्थ्य मंत्री

### खाद्य नियंत्रकों एवं खाद्य सुरक्षा अधिकारियों की दो दिवसीय प्रशिक्षण कार्यशाला में उपस्थित हुए श्याम बिहारी जायसवाल

**रायपुर (विश्व परिवार)।** स्वास्थ्य मंत्री श्याम बिहारी जायसवाल के मुख्य आतिथ्य में गुरुवार को रायपुर के सिविल लाइन सर्किट हाउस में खाद्य एवं औषधि प्रशासन विभाग के सहायक औषधि नियंत्रक, औषधि निरीक्षक एवं खाद्य सुरक्षा अधिकारियों की दो दिवसीय प्रशिक्षण कार्यशाला का शुभारंभ किया गया। प्रशिक्षण कार्यशाला में प्रदेश के 100 औषधि नियामकों की उपस्थिति रही। स्वास्थ्य मंत्री श्री श्याम बिहारी जायसवाल ने दो दिवसीय प्रशिक्षण कार्यशाला को संबोधित करते हुए कहा देश के 30 लाख करोड़ के मेडिकल व्यापार का आधार आप सब हैं। उन्होंने औषधि निरीक्षको के कार्यो के संबंध में कहा कि आप लोगों के द्वारा दवा एवं मेडिकल डिवाइसेस की गुणवत्ता का निर्धारण सुनिश्चित किया जाता है और आपके कार्यों पर विश्वास कर पूरा देश मेडिकल प्रोडक्ट्स का उपयोग कर रहा हैं। इस परिस्थितियों में आपको अपने दायित्वों का निर्वहन करते हुए उस विश्वास को बनाये रखना है। श्री जायसवाल ने प्रशिक्षण की उपयोगिता तथा प्रशिक्षण के बाद उसके संवेदनशील क्रियान्वयन के महत्व को लेकर विस्तार से बात की। श्री जायसवाल ने कहा कि यह प्रशिक्षण कार्यशाला छत्तीसगढ़ को फार्मास्यूटिकल एवं मेडिकल डिवाइस हब के रूप में स्थापित करने में अहम भूमिका निभायेगी।

इस मौके पर अधिकारियों को संबोधित करते हुए छत्तीसगढ़ शासन के खाद्य एवं औषधि विभाग के नियंत्रक श्री चंदन कुमार ने कहा कि औषधि एवं मेडिकल डिवाइसेस के व्यापार में लगातार वृद्धि हो रही है। उन्होंने भारत के संबंध में बात करते हुए कहा कि पूरे विश्व में ऐसा कोई देश नहीं है जहां पर भारतीय दवा अथवा मेडिकल डिवाइसेस की आपूर्ति नहीं की जाती। श्री चंदन कुमार ने खाद्य नियंत्रको और खाद्य सुरक्षा अधिकारियों की भूमिका के बारे में बात करते हुए कहा कि आपके अच्छे कार्यों की वजह से ही लोगों को सुविधा मिल पाती है और उन्हें बेहतर मेडिकल संसाधन उपलब्ध हो पाते हैं।

प्रकाशक, मुद्रक, स्वामी प्रियेश कुमार जैन द्वारा आसमां पब्लिसर्स इंडिया प्रा.लि. पंजाब नेशनल बैंक के सामने, जयस्तंभ चौक, रायपुर से मुद्रित एवं ओलंपस जिम के पीछे, सेक्टर-1, शंकर नगर रायपुर (छ.ग.) से प्रकाशित। संपादक : प्रदीप कुमार जैन, फोन नं. : 0771- 4017966, मो.- 9981924252 RNI.NO.CHHHIN/2013/50354